प्रैक्टिसिंग दि पॉवर ऑफ

एकहार्ट टॉल्ल

प्रैक्टिसिंग
दि पॉवर ऑफ
नॉउ

प्रैक्टिसिंग

दि पॉवर ऑफ नॉउ

महत्वपूर्ण उपदेश,
ध्यान-साधना और व्यायाम
'दि पॉवर ऑफ नॉउ' से
(हिन्दी अनुवादः शक्तिमान वर्तमान)

एक्हार्ट टॉल्ल

YogiImpressions®

स्वतन्त्रता का आरम्भ इस बोध से होता है
कि तुम 'चिन्तक' नहीं हो।
जिस क्षण तुम चिन्तक को देखना शुरू कर देते हो,
एक उच्च स्तर की चेतना सक्रिय हो उठती है।
और तब तुम्हें यह अहसास होने लगता है कि
विचार के परे प्रज्ञान का एक विशाल लोक है।
तथा वह विचार उस प्रज्ञान का केवल एक छोटा-सा पहलू है।
तुम्हें यह भी बोध हो जाता है कि वह सभी चीज़ें जिनका वास्तव
में कोई मूल्य है —
सुन्दरता, प्रेम रचनात्मकता, आनन्द, अन्तर प्रशान्ति —
मन के परे से उपजते हैं।

तुम जाग्रत होने लगते हो।

अनुक्रमणिका

प्रस्तावना

परिचय
एक्हार्ट टॉल्ल

भाग एक
वर्तमान में निहित शक्ति को प्राप्त करना

अध्याय एक
सत् और साक्षात्कार

अध्याय दो
भय का मूल

अध्याय तीन
वर्तमान में प्रवेश

अध्याय चार
अचेतना को विलीन करना

अध्याय पाँच
तुम्हारी उपस्थिति की प्रशान्ति में सुन्दरता का उदय होता है

भाग दो
सम्बन्ध को बनाओ आध्यात्मिक अभ्यास

अध्याय छः
पीड़ा-देह को लुप्त कर देना

अध्याय सात

आसक्त से प्रकाशित सम्बन्ध की ओर

भाग तीन

स्वीकृति और समर्पण

अध्याय आठ

वर्तमान की स्वीकृति

अध्याय नौ

बीमारी और पीड़ा का रूपान्तरण

प्रस्तावना

‘दि पॉवर ऑफ नॉउ’ का प्रकाशन २००१ में भारत में हुआ था। उस समय हमने यह सोचा भी न था कि इस किताब में निहित सिखावनियाँ हजारों भारतीयों के मन-मस्तिष्क पर इतना गहरा प्रभाव छोड़ेंगी। जैसा कि हाल ही में एक प्रसिद्ध आध्यात्मिक पत्रिका ने लिखा है, “...और उनकी किताब ‘दि पॉवर ऑफ नॉउ’ जो कि आध्यात्मिक गुरुओं के समाकुल है, अब भारत की भी सबसे सर्वप्रिय किताब सूची में है।” यह इस बात का सबूत है कि हम ऐसी किसी भी सिखावनी के प्रति खुले हैं जो कि वास्तविक है और हमारे हृदय व आत्मा पर अमिट छाप छोड़ती है।

एक्हार्ट फरवरी २००२ में भारत यात्रा पर आये। उन्होंने चेन्नई व पॉण्डिचेरी में सभाओं में भाषण दिया और इसके बाद ऋषिकेश में सात-दिवसीय रिट्रीट हुई। एक्हार्ट की प्रथम भारत यात्रा का समापन मुम्बई में दो सायंकालीन वार्ताओं से हुआ। दोनों शाम ५०० से अधिक लोग वार्ता सुनने के लिये आये।

हाल की मेरी फ्रांस यात्रा के दौरान मैं उस देश के यशस्वी गिरजाघरों को देखने गया। उनका वैभव व शान्तता भारत के महान मन्दिरों की चहल-पहल के एकदम विपरीत थी। फ्रांस जाने के पूर्व, मुम्बई की एक छोटी-सी गली में, सड़क के किनारे पर बने एक मन्दिर के मैंने दर्शन किये थे। आज जब मैं सोचता हूँ तो पाता हूँ कि उस मन्दिर में बिताए पाँच मिनट और फ्रांस के गिरजाघर में बिताए क्षणों में एकरूपता थी। परिवेश भिन्न था पर अनुभव एक था। मुझे तब अहसास हुआ कि ऐसा क्यों था और दोनों जगह में क्या समानता थी। ‘अन्तर’ का अनुभव महत्त्वपूर्ण था, न कि जो ‘बाह्य’ अनुभूति थी जीवन के किसी न किसी क्षण में हम सबने आत्मस्थिति — प्रशान्ति व निःशब्दता का अनुभव किया है। एक्हार्ट इसे अदृश्य अन्तर शरीर कहते हैं जो कि दृश्यमान और गोचर शरीर में सदा स्पन्दित उपस्थिति है। ‘दि पॉवर ऑफ नॉउ’ में वे कहते हैं, “भौतिक रूप के परे, तुम एक ऐसी विस्तृत विशाल और पवित्र सत्ता से जुड़े हो, जिसकी न तो कल्पना की जा सकती है और ना ही उसका वर्णन किया जा सकता है। फिर भी मैं अभी उसके बारे में बात कर रहा हूँ। मैं उसका वर्णन इसलिए नहीं कर रहा कि तुम उसमें विश्वास करने लगो, बल्कि इसलिए जिससे कि तुम उसे स्वयं खोजो और अनुभव करो।”

‘प्रैक्टिसिंग दि पॉवर ऑफ नॉउ’ किताब; तुम्हारी यही करने में मदद रूप होगी। ‘दि

पॉवर ऑफ नॉउ' को एक कदम आगे ले जाते हुए, यह किताब सिखावनियों के सार को प्रकट करती है और हमें यह दिखाती है कि हम किस प्रकार स्वयं को मन की गुलामी से मुक्त करें। ध्यान और अन्य तकनीकों के माध्यम से, एक्हार्ट हमें दिखाते हैं कि किस प्रकार विचारों को शान्त किया जाए, जगत को वर्तमान क्षण में देखा जाए और कैसे उस पथ को खोजा जाए जो कि 'कृपा, सहजता और सुखमय जीवन' की ओर ले जाता है।

मुम्बई से प्रस्थान करने से पूर्व, एक छोटी-सी मुलाकात के दौरान एक्हार्ट ने कहा था कि 'प्रैक्टिसिंग दि पॉवर ऑफ नॉउ' उन लोगों के लिए है जो कि 'दि पॉवर ऑफ नॉउ' का सार एक ऐसी किताब के रूप में चाहते थे, जिसका वे बार-बार परामर्श कर सकें और जो उन्हें दैनिक जीवन में जाग्रत सत्ता में प्रवेश व उसे बनाए रखने में मददगार सिद्ध हो। जिन लोगों ने 'दि पॉवर ऑफ नॉउ' किताब नहीं पढ़ी है या फिर जो किसी भी कारणवश उससे भयभीत हो गये थे, यह किताब उन्हें सिखावनियों को संक्षिप्त रूप में समझने में कारगर होगी, प्रोत्साहित करेगी।

'वर्तमान क्षण' का एक्हार्ट का सन्देश सर्वव्यापी और समयातीत है। पश्चिम में ज़ेन बौद्धमत को लानेवाले सेन्सी न्योजेन सेनजाकी के शब्द उसका सटीक वर्णन करते है। वे कहते हैं, "तुम उसे अपनी आँखों से नहीं देख सकते। अपने हाथों से तुम उसे पकड़ नहीं सकते। नाक से उसकी सुगन्ध नहीं ले सकते। कानों से उसे सुन नहीं सकते। अपनी जिह्वा से उसे चख नहीं सकते। अपने विचारों से उसे रूप नहीं दे सकते। वह यही है!"

हर्ष और शान्ति में।

— गौतम सचदेव
अगस्त, २००२

परिचय

एक्हार्ट टॉल्ल

१९९७ में पहली बार प्रकाशित होने से लेकर अब तक 'दि पॉवर ऑफ नॉउ' ने इस संसार की सामूहिक चेतना पर ऐसा प्रभाव डाला है जो कि मेरी कल्पना व सोच के भी परे था। इस किताब का पन्द्रह भाषाओं में अनुवाद हो चुका है और दुनियाभर के पाठकों से मुझे हर रोज़ पत्र आते हैं जिसमें वे लिखते हैं कि कैसे इस किताब में दिये गये ज्ञान के सम्पर्क में आकर उनके जीवन में अनेक बदलाव हो रहे हैं।

हालाँकि अहंकारी मन की मूर्खता के परिणाम सब जगह दिख रहे हैं, फिर भी कुछ नया उभर रहा है। पहली बार इतने सारे लोग उन सामूहिक मानसिक ढाँचों को तोड़ने को तैयार हैं जिसने मानवता को जन्म-जन्मान्तर से कष्ट की बेड़ियों में जकड़ रखा है। चेतना की एक नयी स्थिति प्रकट हो रही है। हमने बहुत सह लिया है। इस क्षण में जब तुम इस किताब को हाथ में लेकर, एक स्वतन्त्र जीवन जीने की सम्भावना के बारे में पढ़ रहे हो, जिसमें तुम खुद को या फिर दूसरों को कष्ट नहीं दोगे, यह चेतना तुम्हारे अन्तर में उभर रही है।

मुझे पत्र लिखनेवाले अनेक पाठकों ने यह इच्छा ज़ाहिर की है कि 'दि पॉवर ऑफ नॉउ' में दी गयी सीखावनियों को रोज़मर्रा के जीवन में इस्तेमाल कर सकने के और भी आसान तरीके में प्रस्तुत किया जाए। उनका यह अनुरोध इस किताब की प्रेरणा बना।

अभ्यासों व प्रश्नावली के अलावा, इस किताब में मुख्य किताब से लिये गये छोटे-छोटे अंश भी दिये गये हैं। इन्हें देने का मकसद केवल यह है कि ये कुछ विचारों और धारणाओं को तुम्हें फिर से स्मरण करा सकें और दैनिक जीवन में इनका प्रयोग करने में तुम्हें मदद करें।

बहुत से उद्धरण विशेष तौर पर गहन चिन्तन के लिए उपयुक्त हैं। जब तुम चिन्तन करते हुए पढ़ते हो तो तुम नया ज्ञान एकत्र करने के लिए नहीं पढ़ रहे होते। बल्कि तुम एक नयी चेतना में प्रवेश करने के लिए पढ़ रहे होते हो। इसीलिए तुम एक ही उद्धरण को कई बार पढ़ते हो और हर बार तुम्हें उसमें कुछ नया नज़र भी आता है। केवल उपस्थिति के बोध में रहकर लिखे या बोले हुए शब्दों में ऐसी बदलाव लाने वाली शक्ति होती है। यह रूपान्तरणकारी शक्ति एक पाठक में भी उपस्थिति के बोध को जाग्रत करती है।

अच्छा होगा कि इन उद्धरणों को समय लेकर धीरे-धीरे पढ़ा जाए। हो सकता है कि पढ़ते हुए तुम कुछ क्षणों के लिए रुको और शान्त चिन्तन में चले जाओ। अन्य अवसरों पर यह भी हो सकता है कि तुम बस यूं ही किताब खोलकर कुछ पंक्तियाँ पढ़ लो।

यह किताब, उन पाठकों के लिए है जिन्हें 'दि पॉवर ऑफ नॉउ' ने थोड़ा भयभीत या व्याकुल कर दिया था, एक परिचय के रूप में साबित होगी।

– एक्हार्ट टॉल्ल
जुलाई ९, २००१

भाग एक

वर्तमान में
निहित शक्ति को प्राप्त करना

जब तुम्हारा बोध बहिर्मुखी होता है,
मन और संसार प्रकट होते हैं।
जब अंतर्मुखी होता है,
वह अपने स्रोत को पहचान जाता है
और वापस घर आकर अप्रकट में लीन हो जाता है।

अध्याय एक

सत् और साक्षात्कार

जन्म-मरण चक्र के अधीन असंख्य प्रकार के जीवन के परे एक जीवन है जो अनादि व सदैव है। कई लोग उसे ईश्वर नाम से पुकारते हैं; मैं ज्यादातर उसे सत् कहता हूँ। सत् शब्द कुछ भी स्पष्ट नहीं करता, लेकिन ईश्वर शब्द भी तो नहीं करता है। किन्तु सत् की एक उन्मुक्त धारणा होने की वजह से उसका महत्व बढ़ जाता है। वह अनन्त अदृश्य को एक सीमित सत्ता में नहीं बदल देता। उसका मानसिक चित्रण करना असम्भव है। कोई भी सत् को विशिष्ट रूप से प्राप्त करने का दावा नहीं कर सकता। वह तुम्हारी स्वयं की सत्ता है और वह तुम्हारी स्वयं की उपस्थिति के रूप में तुरन्त ही तुम्हारी पहुँच में है। यदि देखें तो शब्द सत् और सत् के अनुभव के बीच बहुत ही कम फ़ासला है।

> **सत् न केवल हर एक रूप के परे है, वह हर एक रूप के अन्तर में भी है।** उसके अदृश्य व अविनाशी सत्व के रूप में उपस्थित है। इसका अर्थ यह है कि वह इस क्षण में तुम्हारे सच्चे स्वरूप, तुम्हारे अन्तरतम् के रूप में तुम्हें प्राप्त है। परन्तु मन से उसे पकड़ने की कोशिश मत करो। उसे समझने की कोशिश न करो।
>
> तुम उसे तभी जान पाओगे जब मन शान्त होगा। जब तुम उपस्थित होते हो, जब तुम्हारा ध्यान वर्तमान क्षण में प्रबल व पूर्णरूप से होता है, सत् को महसूस किया जा सकता है, किन्तु उसे मानसिक रूप से कभी भी नहीं समझा जा सकता।

सत् के बोध को पुनः प्राप्त करना और 'सिद्धिजन्य-भावना' की स्थिति में अवस्थित रहना, साक्षात्कार है।

'साक्षात्कार' शब्द को सुनते ही मन में कुछ दैवी काम कर पाने का विचार आता है और अहम् को इस धारणा को बनाये रखना अच्छा लगता है। परन्तु वास्तव में साक्षात्कार तुम्हारे स्वाभाविक स्वरूप का सत् से ऐक्य का अनुभव है। यह वह स्थिति है जिसमें तुम उस अपार व अविनाशी से जुड़ जाते हो जो विरोधाभासी ढंग से तुम ही हो, परन्तु जो तुमसे भी कहीं अधिक महान है। यह नाम और रूप के परे अपने सच्चे स्वरूप को खोज पाना है।

सम्बद्धता के इस भाव को अनुभव न कर पाने की अयोग्यता, स्वयं से व अपने चारों

ओर के संसार से, अलग होने के भ्रम को जन्म देती है। तब तुम सोच-विचार कर या फिर बिन सोचे ही, स्वयं को एक अलग अपूर्ण अंश समझने लगते हो। भय उपजता है और अन्तर-बाह्य उलझनें मानो प्रतिमान बन जाती हैं।

अपनी सम्बद्धता के सच का अनुभव करने में जो सबसे बड़ी बाधा डालता है वह है तुम्हारी अपने मन से पहचान और यही पहचान विचार को विवशताकारी बना देती है। सोचना बन्द न कर पाना एक कष्टप्रद विपदा है। परन्तु हम यह नहीं देख-समझ पाते क्योंकि लगभग हर एक इससे ग्रस्त है और इसलिए इसे स्वाभाविक समझा जाता है। लगातार हो रहा मानसिक शोर तुम्हें अन्तर स्थिरता के उस लोक को नहीं ढूँढ़ने देता जिसे सत् से अलग नहीं किया जा सकता। वह मन-निर्मित झूठे 'मैं' को रचता है और भय व पीड़ा का पर्दा डाल देता है।

मन से पहचान धारणाओं, चित्रों, शब्दों, निर्णयों और परिभाषाओं की अन्धकारमय धुँधले परदे को बनाता है और यह परदा सभी सच्चे रिश्तों को बनने से रोक देता है। यह तुम और तुम्हारे बीच, तुम और तुम्हारे साथी स्त्री-पुरुषों के बीच, तुम और प्रकृति के बीच, तुम्हारे और ईश्वर के बीच आता है। विचारों का यही पर्दा अलगाव के भ्रम को जन्म देता है, इस भ्रम को कि तुम हो और एक बिल्कुल अलग 'दूसरा' है। ऐसा होने पर तुम इस मूलभूत तथ्य को भूल जाते हो कि शारीरिक छवि और विलग रूप के स्तर के नीचे, तुम सभी चीज़ों के साथ एक हो।

अगर सही प्रयोग में लाया जाए तो मन एक बहुत ही उच्च कोटि का यन्त्र है। परन्तु उसका गलत प्रयोग करने पर वह विनाशकारी रूप ले लेता है। सही मायने में कहूँ तो, ऐसा नहीं है कि तुम मन का गलत इस्तेमाल करते हो — बस तुम उसका इस्तेमाल करते ही नहीं। वह तुम्हारा इस्तेमाल करता है। यह एक रोग है। तुम यह मानते हो कि तुम अपना मन हो। यह एक भ्रम है। यन्त्र ने तुम पर काबु पा लिया है।

तुम्हारे जाने बिना ही तुम उसके वश में आ जाते हो और इसलिए वशकारी सत्ता को स्वयं मान लेते हो।

यह ऐसा है कि मानों तुम्हारे जाने बिना वह तुम पर हावी हो गया हो और इसलिए तुम काम करनेवाली वस्तु को स्वयं मान लेते हो।

> **स्वतन्त्रता का आरम्भ** इस अहसास से होता है कि तुम वशकारी सत्ता, चिंतक, नहीं हो। यह ज्ञान तुम्हें उस सत्ता का निरीक्षण करने की सामर्थ्य देता है। जिस क्षण तुम उस चिंतक को देखने लगते हो, एक उच्च कोटि की जागरूकता सजग हो उठती है।

तुम्हें एहसास होने लगता है कि विचारों के परे अपार ज्ञान का लोक है और यह विचार उस ज्ञान का एक बहुत छोटा-सा पक्ष है। तुम्हें यह भी एहसास होता है कि वह समस्त चीज़ें जिनका महत्व है — सुन्दरता, प्रेम, रचनात्मकता, आनन्द, अन्तर-शान्ति — मन के परे से उत्पन्न होती हैं।

तुम जाग्रत होने लगते हो।

स्वयं को मन से मुक्त करना

शुभ समाचार यह है कि तुम स्वयं को अपने मन से मुक्त कर सकते हो। केवल यह ही सच्चा मोक्ष है। इस क्षण में तुम अपना पहला कदम उठा सकते हो।

अपने मस्तिष्क में उठ रही आवाज़ को जितना हो सके उतना सुनना शुरू करो। खासतौर पर उन विचारों पर ज़्यादा ध्यान दो जो अपने आपको दोहराते रहते हैं; उन ऑडिओ टेपों पर ध्यान दो जो सम्भवतः कई वर्षों से तुम्हारे मस्तिष्क में बजते जा रहे हैं।

मेरे शब्दों में इसे ही 'चिन्तक को देखना' कहते हैं। दूसरे शब्दों में: अपने मस्तिष्क में उठ रही आवाज़ को सुनो, एक साक्षी की तरह वहाँ रहो।

जब तुम इस आवाज़ को सुनो तो निष्पक्ष हो कर सुनो। मानो बिना निर्णयात्मक बने। जो सुनो न तो उसे आँको और न ही उसे बुरा भला कहो, क्योंकि ऐसा करने का मतलब होगा कि वह आवाज़ पीछे के दरवाजे से फिर अन्दर घुस आयी है। तुम्हें जल्दी ही यह एहसास होगा: एक आवाज़ है, और मैं उसे देख-सुन रहा हूँ। यह 'मैं हूँ' का बोध, स्वयं होने का यह बोध, कोई विचार नहीं है। यह मन के परे से उपजता है।

तो जब तुम किसी विचार को सुनते हो, तो तुम न केवल उस विचार के प्रति जागरूक हो वरन् विचार के साक्षी के रूप में स्वयं के प्रति भी जागरूक होते हो। बोध का एक नया आयाम खुल जाता है।

जब तुम विचार को सुनते हो, तो मानो तुम्हें विचार के पीछे या उसके नीचे एक सजग उपस्थिति का — तुम्हारे गहनतम स्वरूप — का अनुभव होता है। अपने मन से पहचान रख कर क्योंकि तुम अपने मन को शक्ति नहीं देते इसलिए विचार का तब तुम पर प्रभाव क्षीण हो जाता है और वह जल्दी ही विलीन हो जाता है। अनैच्छिक और बाध्यताकारी सोचने के अन्त की यह शुरुआत है।

जब विचार विलीन होता है, तब तुम अनुभव करते हो मानसिक बहाव में अनिरन्तरता का। 'अ-मन' का अवकाश, शून्य। शुरू में यह अवकाश छोटे होंगे, शायद कुछ सेकण्ड के लिए, परन्तु धीरे-धीरे वे लम्बे होने लगेंगे। जब ये अवकाश घटते हैं तो तुम अपने अन्तर में एक विशिष्ट प्रशान्ति और स्थिरता का अनुभव करते हो। सत् से तुम्हारी स्वाभाविक

स्थिति की सम्बद्धता के बोध का यह आरम्भ है। उस बोध का जो अधिकतर मन द्वारा छुपा होता है।

अभ्यास के साथ, स्थिरता व प्रशान्ति का भाव गहरा होता जाएगा। वास्तव में, उसकी गहराई का कोई अन्त ही नहीं है। तुम्हें अपने अन्तर की गहराई से आनन्द — सत् के आनन्द, का सूक्ष्म रूप में प्रकट होने का अहसास भी होगा।

अन्तर-सम्बद्धता की इस स्थिति में, तुम मन के साथ पहचान की स्थिति से अधिक सजग हो, अधिक जाग्रत हो। तुम पूर्ण रूप से उपस्थित हो। यह शरीर को जीवन देनेवाली शक्ति-क्षेत्र के स्पंदनात्मक आवृत्ति को बढ़ा देती है।

जैसे-जैसे तुम अ-मन के लोक में गहरे उतरते जाते हो, तुम्हें शुद्ध बोध की स्थिति की अनुभूति होती है। इस स्थिति में, तुम्हें स्वयं की उपस्थिति का इतनी तीव्रता व इतने हर्ष के साथ भान होता है कि उसकी तुलना में, समस्त विचार, समस्त भावनाएँ, तुम्हारी देह और बाह्य संसार नगण्य प्रतीत होते हैं। और फिर भी यह स्वार्थी नही, निःस्वार्थ स्थिति है। पूर्व में तुम जिसे 'स्वयं, मैं हूँ' समझते थे, यह स्थिति तुम्हें उसके परे ले जाती है। यथार्थ में, यह उपस्थिति स्वयं तुम हो और साथ ही साथ तुम से कहीं अधिक महानतर है।

'चिन्तक को देखने' के बजाए, तुम अपने अवधान को वर्तमान क्षण में केन्द्रित करके मन के प्रवाह में शून्यता या अवकाश ला सकते हो। बस, तीव्रता से वर्तमान क्षण के प्रति जागरूक हो जाओ।

ऐसा करने से बहुत सन्तुष्टि मिलती है। इस तरह से, तुम अपने बोध को मन की हलचल से हटते हो और अ-मन की रिक्तता को बनाते हो। अ-मन में तुम बहुत जागरूक व सजग होते हो परन्तु उसमें सोच नहीं रहे होते हो। यही ध्यान का सार है।

इसका अभ्यास तुम अपनी रोज़मर्रा की जिन्दगी में कर सकते हो। कोई भी एक ऐसा दैनिक कार्य लो जो साधारणतः केवल लक्ष्य प्राप्ति का एक साधन है। उस कार्य को अपना पूरा ध्यान दो, इतना कि वह अपने-आप में लक्ष्य बन जाए। उदाहरणार्थ, जब कभी तुम अपने घर में या दफ्तर में सीढ़ियाँ चढ़ो या उतरो, तो अपने हर कदम, हर हरकत, यहाँ तक अपनी श्वास-प्रश्वास पर ध्यान दो। पूर्ण रूप से उपस्थित रहो।

दूसरा उदाहरण हो सकता है कि जब तुम अपने हाथ धो रहे हो, तो उस कार्य में लगी सभी इन्द्रियों पर ध्यान दो। जैसे कि पानी की आवाज़ व उसका एहसास, तुम्हारे हाथों की हरकत, साबुन की खुशबू इत्यादि।

या फिर एक और उदाहरण हो सकता है कि जब तुम अपनी गाड़ी में बैठो तो दरवाजा बन्द करने के बाद, कुछ क्षणों के लिए रुको और अपने श्वास-प्रश्वास के प्रवाह पर ध्यान केन्द्रित करो। शान्त किन्तु शक्तिशाली उपस्थिति के प्रति जागरूक हो जाओ।

> इस अभ्यास में अपनी सफलता को तुम एक मापदण्ड से जान सकते हो और वह है — अपने अन्तर में तुम कितनी प्रशान्ति का अनुभव कर रहे हो।

साक्षात्कार की यात्रा में केवल एक ही अत्यावश्यक कदम है और वह है — अपने मन से अपनी पहचान को त्यागना सीखो। हर बार जब तुम मन के प्रवाह में रिक्तता लाते हो, तब तुम्हारे बोध का प्रकाश और अधिक सशक्त हो जाता है।

एक दिन आयेगा जब तुम अपने मस्तिष्क में उठ रही आवाज़ पर स्वयं को वैसे ही मुस्कुराता हुआ पाओगे जैसे तुम एक बच्चे की चेष्टाओं पर मुस्कुराते हो। इसका यह अर्थ है कि तुम अपने मन में उभर रही बातों को अब गम्भीरता से नहीं लेते क्योंकि अब तुम्हारा होना उस पर निर्भर नहीं करता है।

साक्षात्कारः विचारों के ऊपर उठना

जैसे-जैसे तुम बड़े होते हो, अपनी व्यक्तिगत व सांस्कृतिक परिस्थिति के आधर पर, तुम स्वयं के बारे में, तुम कौन हो इस विषय में, एक मानसिक चित्र बना लेते हो। इस काल्पनिक मैं को हम अहम् कह सकते हैं। यह मानसिक क्रिया से बना हुआ है और केवल निरन्तर सोचते रहने से ही इसका अस्तित्व है। अलग-अलग लोगों के लिए 'अहम्' के अलग-अलग अर्थ हैं। परन्तु यहाँ पर जब मैं उसका प्रयोग कर रहा हूँ तो उसका अर्थ अशुद्ध अहम् है, जो कि मन के साथ अचेत रूप से पहचान स्थापित करने से उभरता है।

अहम् के लिए वर्तमान क्षण शायद ही होता है। केवल भूत और भविष्य को महत्त्वपूर्ण समझा जाता है। सत्य का पूर्णरूप से हेर-फेर इस तथ्य को उजागर करता है कि अहम् की स्थिति में मन बिल्कुल विक्रिय है, काम ही नहीं करता। वह केवल गुज़रे हुए कल को जीवन्त रखने में जुटा होता है क्योंकि उसके बिना — तुम कौन हो? वह भविष्य में स्वयं को प्रेक्षित करता रहता है यह सुनिश्चित करने के लिए कि उसका अस्तित्व रहे और किसी न किसी रूप में वह परिपूर्णता का अनुभव कर सके। वह कहता है; 'एक दिन, जब यह, वह, या कुछ और होगा, तब मैं ठीक होऊँगा, शक्ति का अनुभव करूँगा।'

जब अहम् वर्तमान के प्रति चिन्तित होता प्रतीत होता है, तब भी वह वर्तमान को नहीं देख पा रहा है। वह उसे ही गलत समझता है क्योंकि वह गुज़रे हुए कल की आँखों से उसे देखता है। या फिर वह वर्तमान को लक्ष्य प्राप्ति का एक साधन बना देता है। ऐसा लक्ष्य जो मन-र्निमित भविष्य में कहीं बसता है। अपने मन को देखो और तुम देख पाओगे कि वह ऐसे ही कार्य करता है।

वर्तमान क्षण में मोक्ष की चाभी निहित है। परन्तु जब तक तुम अपने मन में हो, तुम वर्तमान क्षण को नहीं खोज़ सकते।

साक्षात्कार का मतलब है विचार के परे जाना। साक्षात्कारी स्थिति में, जब ज़रूरत होती है तुम अपने सोचनेवाले मन का प्रयोग करते हो, परन्तु पहले से अधिक केन्द्रित और प्रभावी तरीके से। तुम अधिकतर व्यावहारिक चीज़ों के लिए उसका इस्तेमाल करते हो, परन्तु तुम उसके अनैच्छिक अन्तर-वार्तालाप से मुक्त होते हो और वह अन्तर-स्थिरता होती है।

जब तक मन का इस्तेमाल करते हो, विशेष तौर पर जब कोई रचनात्मक हल चाहिए होता है, तो तुम हर कुछ मिनट के अन्तराल पर विचार और स्थिरता, मन और अ-मन के बीच में डोलते हो। अ-मन विचाररहित बोध है। केवल इस तरीके से रचनात्मक सोचना सम्भव है क्योंकि केवल इसी तरीके में विचार वास्तव में सशक्त होता है।

जब विचार बोध के अपार अनन्त लोक से नहीं जुड़ा होता तो वह बहुत शीघ्र ही वह निष्फल, विक्षिप्त, विनाशकारी बन जाता है।

भावनाएँ: तुम्हारे मन के प्रति शरीर की प्रतिक्रिया

जिस प्रकार से मैं मन शब्द का प्रयोग करता हूँ, उसका अर्थ केवल विचार नहीं है। उसमें तुम्हारी भावनाएँ और सभी निर्बोध मानसिक व भावनात्मक प्रतिक्रियाशील पैटर्न सम्मिलित है। जहाँ मन और शरीर मिलता है, उस स्थान में भावनाओं का उदय होता है। यह तुम्हारे मन के प्रति तुम्हारे शरीर की प्रतिक्रिया है—या फिर तुम यह भी कह सकते हो कि तुम्हारे शरीर में मन का प्रतिबिम्ब है।

जितना अधिक तुम अपनी सोच, अपनी रुचि-अरुचि, अनुमान और भावार्थ से पहचान रखते हो, जिसका अर्थ यह है कि तुम द्रष्टा बोध में कम उपस्थित हो, उतना अधिक भावनात्मक शक्ति की पकड़ होगी। ये अलग बात है कि तुम, उसके प्रति सचेत हो या नहीं। यदि तुम अपनी भावनाओं को महसूस नहीं कर पाते हो, यदि तुम उनसे कटे हुए हो, तो अन्त में तुम उन्हें दैहिकरूप में, शारीरिक कष्ट के रूप में अवश्य अनुभव करोगे।

> **यदि तुम्हें अपनी भावनाओं को महसूस करने में मुश्किल होती है,** तो अपने शरीर के अन्तर-शक्ति क्षेत्र पर अपना ध्यान केन्द्रित करना शुरू करो। अन्तर से अपने शरीर को महसूस करो। यह तुम्हें तुम्हारी भावनाओं से जोड़ देगी। यदि तुम सच में अपने मन को जानना चाहते हो, तुम्हारा शरीर तुम्हें सच्चा प्रतिबिम्ब दिखायेगा। इसलिए भावनाओं को देखो, या फिर अपने शरीर को महसूस करो। यदि उनके बीच में प्रकट द्वन्द्व है, तो विचार झूठा होगा और भावना सच कह रही होगी। तुम कौन हो, यह चरम सत्य नहीं, वरन् उस समय तुम्हारे मन की स्थिति का सापेक्ष सत्य।

हो सकता है तुम अभी तक अचेतन मन के क्रियाकलाप को विचार के रूप में अपने बोध में नहीं ला पाते होगे, परन्तु वह भावना के रूप में हरदम तुम्हारे शरीर में प्रतिबिम्बित होगा और तुम इसके प्रति जागरूक हो सकते हो।

अपनी भावना को इस तरह से देखना, विचार को सुनने और देखने जैसा ही है, जिसका मैंने पूर्व में वर्णन किया है। फ़र्क केवल इतना है कि विचार तुम्हार सिर में है, भावना में तीव्र शारीरिक घटक है और इसलिए उसे मूलतः शरीर में महसूस किया जाता है। तुम फिर भावना द्वारा बिना नियन्त्रित हुए बिना उस भावना को बस वहाँ रहने दे सकते हो। अतः तुम भावना नहीं हो; तुम द्रष्टा हो।

यदि तुम इसका अभ्यास करो, तो तुम्हारे अन्तर में वह सब जो अचेतन है बोध के प्रकाश में प्रकाशित हो जाएगा।

स्वयं से पूछने की आदत बना लो: इस क्षण में मेरे अन्तर में क्या चल रहा है? यह प्रश्न तुम्हें सही दिशा में ले जाएगा। पर विश्लेषण मत करो, केवल देखो। अपने अवधान को अन्तर पर केन्द्रित करो। भावना की शक्ति को महसूस करो।

यदि कोई भी भावना नहीं है, तो अपने अवधान को अपने शरीर के अन्तर शक्ति-क्षेत्र की गहराई में ले जाओ। यह सत् का द्वार है।

अध्याय दो

भय का मूल

भय की मनोवैज्ञानिक दशा किसी भी ठोस और तात्कालिक जोखिम से विलग है। वह अनेक रूपों में प्रकट होता है: बेचैनी, चिन्ता, व्यग्रता, अधीरता, टेंशन, भय, संत्रास, इत्यादि। इस प्रकार का मानसिक भय इसलिए होता है कि कुछ हो सकता है, न कि इसलिए कि अभी कुछ घट रहा है। तुम तो वर्तमान में हो, परन्तु तुम्हारा मन भविष्य में चला जाता है। यह व्यग्रता पैदा करता है। और यदि तुम अपने मन से जुड़े हो और वर्तमान की सादगी और शक्ति से तुम्हारा सम्पर्क टूट गया है, तो फिर यह व्यग्रता तुम्हारी हमेशा का साथी बन जाएगी। तुम वर्तमान क्षण का सामना कर सकते हो, परन्तु उसका कैसे सामना करोगे जो केवल तुम्हारे मन का ठेला है। तुम भविष्य का सामना नहीं कर सकते।

इसके अतिरिक्त, जब तक तुम्हारी तुम्हारे मन से पहचान होती है, अहम् तुम्हारे जीवन को चलाता है। अपने काल्पनिक स्वभाव व विस्तृत बचावी ढांचे के होते हुए भी, अहम् बहुत ही संवेदनशील और डरा हुआ महसूस करता है और उसे हरदम खतरे की आशंका लगी रहती है। यह तब भी होता है, जब अहम् बाहरी तौर पर बहुत विश्वास से भरा प्रतीत होता है। याद रखने की बात यह है कि कोई भी सन्देश, तुम्हारे मन के विरुद्ध की गई तुम्हारे शरीर की प्रतिक्रिया है। वह कौन-सा सन्देश है जो हर क्षण तुम्हारा अहम्, झूठा, मन-निर्मित अहम्, तुम्हारे शरीर को दे रहा है? खतरा, मैं खतरे में हूँ। और वह कौन-सी भावना है जो इस हरदम मिल रहे सन्देश के कारण उपजती है? भय, और क्या।

भय के अनेक कारण हो सकते हैं। खोने का भय, असफलता का भय, चोट लगने का भय, इत्यादि। परन्तु देखें तो सब भय में मृत्यु का भय या मिट जाने का भय होता है। अहम् के लिए मृत्यु बस अगले मोड़ पर इन्तज़ार कर रही होती है। मन से पहचान करने की इस स्थिति में, मृत्यु का भय हमारे जीवन के हर पहलू को प्रभावित करता है।

उदाहरण के लिए, हर बहस में सही होने की ज़रूरत और दूसरे व्यक्ति को गलत ठहराने की छोटी-सी और 'साधारण' प्रतीत होने वाली आदत — जिसमें तुम उस मानसिक स्थिति का बचाव कर रहे होते हो जिससे तुम्हारा मन जुड़ा होता है — इसलिए उत्पन्न होती है क्योंकि तुम्हें मृत्यु का भय है। यदि तुम किसी मानसिक स्थिति से जुड़ते हो और फिर तुम अगर गलत हो, तो मन-निर्मित होने के भाव को मिटने का खतरा सताने

लगता है। इसलिए अहम् के रूप में तुम कभी गलत हो ही नहीं सकते। गलत होना माने मरना है। इस पर कई लड़ाइयाँ भी लड़ी जा चुकी हैं और अनगिनत रिश्ते टूट चुके हैं।

एक बार तुम मन से अपनी पहचान को छोड़ देते हो, तो तुम चाहे सही हो या गलत, उससे तुम्हारे आत्म-बोध को कोई फर्क नहीं पड़ता। और इस वजह से जबरन सही होने की गहरी अचेतन ज़रूरत, जो कि एक तरह की हिंसा है, वह तुम्हारे अन्दर में नहीं उठेगी। तुम स्पष्ट रूप से और जोर दे कर यह बता पाओगे कि तुम्हें कैसा लग रहा है या फिर तुम क्या सोच रहे हो। और ऐसा करते हुए न तो तुममें स्वयं को बचाने की चाह होगी और न ही तुम ज़रूरत से ज़्यादा उत्तेजित होगे। ऐसा होने पर तुम्हारा 'होने का भाव' तुम्हारे अन्दर के एक गहरे और सच्चे स्थान से आयेगा, न कि मन से।

अपने अन्दर किसी भी प्रकार बचाव करने की भावना के प्रति सचेत रहो। तुम किसका बचाव कर रहे हो? एक भ्रामक पहचान, तुम्हारे मन में उभरा एक चित्र? एक काल्पनिक सत्ता। इस वृत्ति को चेतन करके, उसके साक्षी बनकर, तुम उससे अपने सम्बन्ध को तोड़ देते हो। तुम्हारी चेतना के प्रकाश में अचेतन वृत्तियाँ बहुत जल्दी ही घुल जाएँगी।

रिश्तों को खोखला बनाने वाली सभी बहसों और सत्ता-खेल का यहीं अन्त हो जाता है। दूसरों पर अधिकार जमाना, शक्ति के भेष में छिपी कमज़ोरी है। सच्ची शक्ति तुम्हारे अन्तर में है और इस क्षण में तुम्हें उपलब्ध है।

मन हमेशा वर्तमान को नकारने की कोशिश करता रहता है और उससे भागने की भी। दूसरे शब्दों में, जितनी अधिक तुम्हारी मन से पहचान है, उतना अधिक तुम्हें कष्ट भी होगा। या फिर ऐसा भी कह सकते हो; जितना अधिक तुम वर्तमान को स्वीकार सकते हो और उसका आदर कर सकते हो, उतना अधिक तुम कष्ट या दर्द से मुक्त होते हो और अहम्-मन से मुक्त होते हो।

यदि तुम अपने या फिर दूसरों के लिए दर्द नहीं चाहते हो, यदि तुम उस दर्द को अधिक नहीं बढ़ाना चाहते जो अब भी तुम्हारे अन्तर में है, तो समय का और निर्माण मत करो। या कम से कम केवल उतने ही समय का निर्माण करो, जितना कि तुम्हें जीवन के व्यावहारिक पहलुओं में लगता है। समय का निर्माण करना कैसे बन्द किया जाए?

यह अच्छी तरह समझ लो कि तुम्हारे पास केवल वर्तमान क्षण ही है। वर्तमान को अपने जीवन की प्राथमिकता बना लो।

पहले तुम समय में रहते थे और कभी-कभी वर्तमान में आते थे। अब वर्तमान को अपना घर बना लो और भूत व भविष्य में तभी जाओ जब जीवन की किसी व्यावहारिक परिस्थिति को समझना हो।

वर्तमान क्षण को हरदम अपनी स्वीकृति दो। उसे 'हाँ' कहो।

अन्त करो समय के भ्रम का

समय के भ्रम का अन्त करो — यह द्वार है। समय और मन को अलग नहीं किया जा सकता। मन से समय को हटा दो और वह रुक जाता है — यदि तुम उसका इस्तेमाल करना चाहो तो यह अलग बात है।

अपने मन द्वारा पहचाने जाना ऐसा है मानो तुम समय में फँस गये हो: केवल यादों या फिर आगे क्या होगा, इस भावना के साथ जीने के लिए बाध्य हो। इससे भूत और भविष्य के साथ तुम्हारी अन्तहीन मानसिक व्यस्तता हो जाती है और वर्तमान क्षण को स्वीकारने और उसको सम्मान करने तथा उसमें होने की अनिच्छा का जन्म होता है। बाध्यता इसलिए जन्म लेती है क्योंकि अतीत तुम्हें एक पहचान देता है और भविष्य मुक्ति का वचन, किसी भी रूप में संतुष्टि का वादा करता है। दोनों ही भ्रम हैं।

जितना अधिक तुम अतीत और भविष्य पर केन्द्रित होते हो, उतना अधिक तुम वर्तमान को, जो कि सबसे बहुमूल्य है, खो देते हो।

क्यों है यह सबसे बहुमूल्य? सबसे पहले, क्योंकि केवल वही है। उसके सिवा कुछ और है ही नहीं। शाश्वत वर्तमान अन्तर में वह स्थान है जिसमें तुम्हारा पूरा जीवन प्रकट होता रहता है। यह वह एक घटक है जो हरदम रहता है। जीवन अभी है। ऐसा कभी समय न था जब जीवन वर्तमान में न था, ना ही ऐसा समय आयेगा जब यह होगा।

दूसरी बात, वर्तमान ही केवल वह बिन्दु है जो तुम्हें मन की सीमित चारदीवारी के परे ले जा सकता है। समय के समयातीत और रूपातीत लोक में प्रवेश करने के लिए यही तुम्हारा एकमात्र द्वार है।

क्या तुमने कभी वर्तमान के बाहर कुछ अनुभव किया है, कुछ कार्य किया है, सोचा या महसूस किया है? क्या तुम्हें लगता है कभी करोगे? क्या वर्तमान के बाहर कुछ होना सम्भव है? उत्तर स्पष्ट है, क्या ऐसा नहीं है?

अतीत में कुछ भी नहीं घटा है; वह वर्तमान में ही घटा। भविष्य में भी कभी कुछ नहीं घटेगा; वह केवल वर्तमान में ही होगा।

यहाँ जो मैं कह रहा हूँ, उसे मन द्वारा नहीं समझा जा सकता। जिस क्षण तुम समझ लेते हो, तुम्हारी चेतना में परिवर्तन आता है — मन से आत्मा का, समय से उपस्थिति का। अचानक सबकुछ जीवन्त हो उठता है।

अध्याय तीन

वर्तमान में प्रवेश

समयातीत आयाम के साथ आता है एक भिन्न प्रकार का अभिज्ञान, एक जानने का। ऐसी समझ जो हर प्राणी और हर चीज़ में रहनेवाली आत्मा को 'नष्ट' नहीं करती। ऐसी समझ जो जीवन की पावनता और रहस्य को नष्ट नहीं करती। बल्कि जो कुछ भी है उसके प्रति गहन प्रेम व सम्मान को बनाये रखती है। ऐसा जानना जिसके बारे में मन कुछ नहीं जानता।

वर्तमान क्षण को अस्वीकारने और उसका प्रतिरोध करने की अपनी पुरानी शैली को तोड़ दो। ऐसा अभ्यास बना लो कि अपने ध्यान को भूत और भविष्य से वापस ले आओ, खासतौर पर जब उनकी ज़रूरत न हो। रोज़मर्रा की जिन्दगी में जितना हो सकता है उतना समय के आयाम के बाहर आओ।

यदि वर्तमान में सीधा प्रवेश करना तुम्हें मुश्किल लगता है तो अपने मन की वर्तमान से भागने की स्वाभाविक आदत का निरीक्षण करना शुरू करो। तुम पाओगे कि भविष्य को अक्सर वर्तमान से अच्छा या फिर बुरा सोचा जाता है। यदि कल्पित भविष्य अच्छा है, तो तुम्हें आशा बँधती है या फिर आनन्दकारी प्रतीक्षा होती है। यदि वह बुरा दिखता है तो उससे चिन्ता होती है। दोनों ही भ्रामक है।

आत्म-निरीक्षण द्वारा तुम्हारे जीवन में अपने आप ही अधिक जागरूकता आ जाती है। जैसे ही तुम्हें पता चलता है कि तुम उपस्थित नहीं हो, वर्तमान में नहीं हो, तुम वर्तमान में आ जाते हो। जब कभी भी तुम अपने मन को देख पाते हो, तुम उसके जाल में फँसे हुए नहीं होते हो। एक और पहलू उभरा है, ऐसा कुछ जो मन का नहीं है: साक्षी भाव।

अपने मन के दर्शक बन कर रहो। अपने विचारों व संवेगों के साथ ही साथ विभिन्न परिस्थितियों में अपनी प्रतिक्रिया के दर्शक बनो। अपनी प्रतिक्रिया में कम से कम इतनी दिलचस्पी तो दिखाओ जितनी तुम्हें उस परिस्थिति या व्यक्ति में है जिसके कारण तुमने प्रतिक्रिया की थी।

यह भी देखो कि कितनी बार तुम्हारा ध्यान भूत या भविष्य में है। जो

> तुम देखते हो, ना तो उसका विश्लेषण करो और ना ही आँको। विचार को देखो, संवेग को महसूस करो, प्रतिक्रिया को जाँचो। व्यक्तिगत समस्या न बना लो। तब तुमने जो देखा है या जाँचा है उससे कहीं अधिक सशक्त होने का तुम्हें अनुभव होगा: तुम्हारे मन के विषयों के पीछे की शान्त, स्थिर निरीक्षक उपस्थिति, मौन द्रष्टा।

सशक्त उपस्थिति की ज़रूरत पड़ती है तब कुछ परिस्थितियाँ एक प्रबल भावनात्मक संवेग युक्त प्रतिक्रिया को जन्म देती हैं। उदाहरण के लिए, जब तुम्हारी आत्म-धारणा संकट में होती है, तुम्हारे जीवन में एक चुनौती आती है और वह भय को जन्म देती है, चीजें 'गलत' होने लगती हैं या फिर बीते हुए कल से कोई जटिल भावना उभर आती है। इन सभी उदाहरणों में, तुम्हारी 'अचेत' हो जाने की प्रवृत्ति होती है। वह प्रतिक्रिया या संवेग तुम पर हावी हो जाता है — और तुम वह 'बन' जाते हो। तुम उस संवेग जैसा बर्ताव करते हो। तुम उसे सच साबित करना चाहते हो, बाकी को गलत, आक्रमण करते हो, बचाव करते हो... केवल यह नहीं समझते कि वह तुम नहीं हो, वह एक प्रतिक्रियात्मक वृत्ति है, मन की अस्तित्व बचाने की चाल।

मन के साथ तादात्म्य रखने के कारण उसे अधिक शक्ति मिलती है; मन का निरीक्षण करने से वह शक्ति क्षीण हो जाती है। मन से तादात्म्य अधिक समय का निर्माण करता है; मन का निरीक्षण करना समय से परे के पहलू को खोल देता है। मन से वापस ली हुई शक्ति उपस्थिति में परिवर्तित हो जाती है। एक बार जब तुम यह अनुभव कर पाते हो कि वर्तमान में होने का क्या अर्थ है, तब तुम्हारे लिए समय के पहलू से बाहर आने का चुनाव करना, खासतौर पर तब जब व्यावहारिक कामों के लिए समय की ज़रूरत नहीं है, बहुत आसान हो जाता है। फिर तुम वर्तमान में और गहरे से प्रवेश कर पाते हो।

ऐसा करने से व्यावहारिक कामों के लिए समय — भूत व भविष्य — का इस्तेमाल करने की तुम्हारी क्षमता कमज़ोर नहीं पड़ती। ना ही अपने मन का प्रयोग करने की तुम्हारी क्षमता क्षीण होती है। वास्तव में, तुम्हारी क्षमता प्रबल हो जाती है। जब तुम अपने मन का प्रयोग करोगे तो वह अधिक केन्द्रित व तीक्ष्ण होगा।

आत्मज्ञानी व्यक्ति के ध्यान का केन्द्रबिन्दु हरदम वर्तमान होता है। फिर भी सतही रूप में वह समय के प्रति जाग्रत रहते हैं। दूसरे शब्दों में, वे घड़ी के समय का प्रयोग करते हैं परन्तु मानसिक समय से बिल्कुल मुक्त होते हैं।

मानसिक समय को त्यागना

जीवन के व्यावहारिक पहलुओं में समय का उपयोग करना सीखो। हम इसे 'घड़ी समय' कह सकते हैं। परन्तु उन व्यावहारिक मुद्दों के समाप्त होने पर, तुरन्त ही वर्तमान-क्षण के बोध में लौट आओ। ऐसा करने से, उस 'मानसिक समय' का कोई निर्माण नहीं होगा, जो

कि भूत से तादात्म्य व भविष्य की लगातार विवशकारी कल्पना है।

यदि तुम किसी लक्ष्य को चुनते हो और उसे पाने के लिए कार्य करते हो, तो तुम घड़ी समय का प्रयोग कर रहे हो। तुम्हें यह पता है कि तुम्हें कहाँ जाना है परन्तु तुम इस समय में जो कदम उठा रहे हो उसका सम्मान करते हो और उसमें अपना पूरा ध्यान भी लगाते हो। परन्तु यदि तुम लक्ष्य पर ज़रूरत से ज़्यादा केन्द्रित हो जाओ, हो सकता है इसलिए क्योंकि तुम खुशी, सन्तुष्टि या आत्मा की पूर्ण अनुभूति चाहते हो, तो वर्तमान का सम्मान नहीं होता है। वह भविष्य में पहुँचने के लिए मात्र एक सीढ़ी बन कर रह जाता है, उसका कोई विशिष्ट मूल्य नहीं होता। ऐसे में घड़ी समय, मानसिक समय बन जाता है। तुम्हारे जीवन की यात्रा कोई साहसिक यात्रा नहीं होती; बल्कि पहुँचने की, पाने की, कुछ 'कर दिखाने' की, एक बाध्यकारी ज़रूरत बनकर रह जाती है। फिर तुम सड़क के किनारे लगे फूलों को न तो देख पाते हो, न उनकी सुगन्ध को महसूस कर पाते हो और ना ही वर्तमान में रहने पर, जीवन के चमत्कार और उसकी सुन्दरता, जो तुम्हारे चारों ओर प्रकट हो रही है, उसके प्रति जागरूक हो पाते हो।

क्या तुम जहाँ हौ, उसकी बजाए कहीं और होने की कोशिश करते रहते हो? क्या तुम जो कुछ भी करते हो वह मात्र अन्त तक पहुँचने की चेष्टा है? क्या तुम्हारे लिए परिपूर्णता बस अगले मोड़ पर होती है या फिर क्षणिक सुखों जैसे संभोग, खाना, पीना, मादक पदार्थ लेना, रोमांचक व उत्तेजनात्मक कार्यों तक ही सीमित है? क्या तुम सदा कुछ बनने, पाने और पहुँचने पर ही केन्द्रित रहते हो या फिर कुछ नये सुख या रोमांच के पीछे भागते रहते हो? क्या तुम ऐसा मानते हो कि यदि तुम बहुत सारी चीज़ें पा लो तो तुम अधिक परिपूर्ण और अच्छे या मानसिक रूप से पूर्ण होगे? क्या तुम किसी पुरुष या स्त्री का इन्तज़ार कर रहे हो जो कि तुम्हारे जीवन को अर्थपूर्ण बनायेगा?

सामान्य तौर पर, मन से तादात्म्य स्थापित करनेवाली आत्मज्ञान रहित शक्ति की स्थिति में, वर्तमान में छिपी शक्ति और अनन्त सृजनात्मक क्षमता, पूर्णरूप से मानसिक समय द्वारा अदृश्य हो जाते हैं। तुम्हारा जीवन तब अपनी ज़िन्दादिली, ताज़गी और आश्चर्य को खो देता है। विचार, संवेग, बर्ताव, प्रतिक्रिया और इच्छा के पुराने तौर-तरीके अन्तहीन रूप से बार-बार दोहराये जाने लगते हैं। मन की एक ऐसी पटकथा जो तुम्हें एक पहचान देती है परन्तु वर्तमान की वास्तविकता को ढँक देती है या फिर विकृत कर देती है। ऐसा होने पर मन असन्तोषप्रद वर्तमान से भागने के लिए भविष्य से मोह की रचना करता है।

जो तुम भविष्य के रूप में देखते हो, वह वास्तव में इस क्षण में तुम्हारे बोध का एक अभिन्न अंग है। यदि तुम्हारा मन बीते हुए कल के बोझ को ढो रहा है, तो तुम उसी का ज़्यादा अनुभव करोगे। वर्तमान की कमी के कारण भूत अपने को कायम रखता है। इस क्षण में तुम्हारे बोध का गुण तुम्हारे भविष्य को आकार देता है — जो कि वर्तमान में ही अनुभव किया जा सकता है।

यदि इस क्षण में तुम्हारे बोध के गुण से भविष्य निर्धारित होता है, तो फिर वह क्या है जो कि बोध के गुण को निर्धारित करता है? तुम्हारी उपस्थिति की मात्रा। अतः वह जगह,

जहाँ सच्चा परिवर्तन हो सकता है और जहाँ बीता हुआ कल पूर्ण रूप से विलीन हो सकता है, वह है वर्तमान।

शायद तुम्हारे लिए यह पहचानना मुश्किल हो कि समय ही तुम्हारी सारी दिक्कतों व पीड़ाओं का कारण है। तुम यह मानते हो कि वे तुम्हारे जीवन की विशिष्ट घटनाओं के कारण हुआ है और यदि पारम्पारिक दृष्टि से देखें तो यह सच है। परन्तु जब तक तुमने मन के मूलभूत परेशानी उत्पन्न करनेवाली गड़बड़ी — भूत व भविष्य से लगाव और वर्तमान को अस्वीकारना — को नहीं सुधारा है, तब तक वास्तव में दिक्कतें अदलती-बदलती रहेंगी।

यदि चमत्कारिक रूप से आज तुम्हारी सारी दिक्कतों या फिर पीड़ा व दुःख के सम्भावित कारणों को दूर कर दिया जाए, पर तुम अभी भी अधिक उपस्थित न हुए हो, अधिक जागरूक न हुए हो, तो तुम स्वयं को शीघ्र ही उसी प्रकार की दिक्कतों व पीड़ा के कारणों में उलझा हुआ पाओगे। ठीक उसी तरह जैसे जहाँ कहीं भी तुम जाते हो तुम्हारी परछांई तुम्हारे साथ जाती है। अन्ततः केवल एक ही समस्या है: समय बन्धन में जकड़ा हुआ मन।

समय में कोई उद्धार नहीं है। तुम भविष्य में मुक्त नहीं हो सकते।

मुक्ति की कुंजी उपस्थिति में है, इसलिए तुम केवल वर्तमान में, अभी मुक्त हो सकते हो।

जीवन-परिस्थितियों में जीवन खोजना

जिसे तुम 'जीवन' कहते हो, उसे सही मायने में तुम्हारी 'जीवन परिस्थिति' कहना चाहिए। वह मानसिक समय है: भूत व भविष्य। बीते हुए कल में कई घटनाएँ वैसी नहीं हुई जैसा तुम चाहते थे। तुम अभी भी कल जो हुआ उसका प्रतिरोध कर रहे हो, और अब जो है तुम उसका भी प्रतिरोध कर रहे हो। जो तुम्हें बनाए रखती है वह है आशा, परन्तु आशा तुम्हें भविष्य पर केन्द्रित रखती है और इस केन्द्रण की निरन्तरता की वजह से तुम वर्तमान को नकारने के भाव को कायम रखते हो और अपनी अप्रसन्नता को स्थाई बना लेते हो।

कुछ समय के लिए अपनी जीवन-परिस्थिति को भूल जाओ और अपने जीवन पर ध्यान दो।

तुम्हारी जीवन-परिस्थिति का अस्तित्व समय में है। तुम्हारा जीवन वर्तमान में।

तुम्हारी जीवन-परिस्थिति मन का खेल है। तुम्हारा जीवन वास्तविक है।

'जीवन तक ले जाने वाले संकरे द्वार' को खोजो। उसे वर्तमान कहते हैं। अपने जीवन को सँकरा करके इस क्षण में ले आओ। हो सकता है तुम्हारी जीवन-परिस्थिति परेशानियों से भरी हो — अधिकतर जीवन-परिस्थितियां होती हैं — परन्तु यह खोजो कि क्या तुम्हें इस क्षण में कोई दिक्कत है। कल नहीं या फिर दस मिनट बाद भी नहीं, इस क्षण में। क्या तुम्हें इस क्षण में कोई परेशानी है?

जब तुम परेशानियों से घिरे होते हो, तो कुछ नये को अन्दर आने की जगह नहीं होती है, हल के लिए जगह नहीं होती। तो जब भी हो सके, थोड़ी जगह बनाओ, थोड़े स्थान का निर्माण करो, जिससे कि तुम जीवन-परिस्थिति के नीचे छिपे जीवन को ढूँढ़ सको।

अपनी इन्द्रियों का पूरा इस्तेमाल करो। जहाँ तुम हो, वहाँ रहो। आस पास देखो। केवल देखो, समझने की कोशिश मत करो। प्रकाश, रूप-आकार, रंग, बनावट को देखो। हर चीज़ में निहित शान्त उपस्थिति के प्रति जागरूक रहो। उस विस्तार के प्रति सजग रहो जो हर चीज़ को होने देती है।

ध्वनियों को सुनो, उनको परखो नहीं। ध्वनि में निहित मौन को सुनो।

कुछ स्पर्श करो — कुछ भी — और उसके होने को महसूस करो व उसे स्वीकार करो।

अपनी श्वास-प्रश्वास के लय को देखो; वायु को अन्दर-बाहर आता महसूस करो, अपने शरीर में प्राण-शक्ति का अनुभव करो। अन्दर-बाहर, जो जैसा है, उसे वैसा रहने दो। हर चीज़ के 'होने' को स्वीकार करो। गहनता से वर्तमान में प्रवेश करो।

तुम अन्यमनस्कता व समय के अचेतन संसार को पीछे छोड़ रहे हो। तुम विक्षिप्त मन, जो कि प्राण शक्ति से तुम्हें विहीन कर रहा है, के चंगुल से बाहर आ रहे हो। वह विक्षिप्त मन धीरे-धीरे पृथ्वी को विषाक्त व विध्वंस कर रहा है। तुम समय के स्वप्न से जाग रहे हो और वर्तमान में आ रहे हो।

सभी परेशानियाँ मन का भ्रम हैं

वर्तमान में अपने ध्यान को केन्द्रित करो और मुझे बताओ कि इस क्षण में तुम्हें क्या परेशानी है।

मुझे कोई जवाब नहीं मिल रहा है, क्योंकि जब तुम्हारा ध्यान पूरी तरह से वर्तमान में होता है तो किसी भी परेशानी का होना नामुमकिन है। परिस्थिति का या तो सामना करना होता है या फिर उसे स्वीकार करना होता है। उसे परेशानी में क्यों बदलना?

मन, बिना जाने, परेशानियों से प्यार करता है क्योंकि वह तुम्हें एक तरीके की पहचान देती हैं। यह सामान्य बात है और एकदम बेवकूफ़ी भी। 'परेशानी' का अर्थ यह है कि तुम मानसिक रूप से किसी परिस्थिति पर विचार कर रहे हो और इस परेशानी का न तो कोई सच्चा उद्देश्य है और ना ही कुछ करने की कोई सम्भावना ही है। तथा तुम उसे बिना जाने हुए ही अपना एक हिस्सा बना रहे हो। तुम अपनी जीवन परिस्थिति से इतना भाव-विभोर हो जाते हो कि तुम जीवन का व अपने अस्तित्व के होने के भाव को ही खो देते हो। या फिर तुम अपने मन में उन सैंकड़ों चीज़ों का मूर्खतापूर्ण बोझ ढो रहे होते हो जो तुम भविष्य में करना चाहते हो। बजाए इसके कि तुम उस एक चीज़ पर केन्द्रित हो जो तुम अभी वर्तमान में कर सकते हो।

> **जब तुम परेशानी का निर्माण करते हो,** तुम पीड़ा का निर्माण करते हो। ज़रूरत केवल एक साधारण चुनाव, एक साधारण निर्णय लेने की होती है: चाहे कुछ भी क्यों न हो, मैं और अधिक पीड़ा का निर्माण नहीं करूँगा। मैं और अधिक परेशानियों का निर्माण नहीं करूँगा।

यद्यपि यह एक साधारण चुनाव है, पर यह बहुत ही बुनियादी है। तुम यह चुनाव तब तक नहीं करोगे जब तक तुम अपनी पीड़ा से उकता नहीं गये हो, जब तक तुम वास्तव में बहुत सह चुके हो। और तुम उस चुनाव को कायम भी नहीं रख पाओगे यदि तुम वर्तमान की शक्ति में प्रवेश नहीं कर जाते। यदि तुम अपने लिए और पीड़ा पैदा नहीं करते तो तुम दूसरों के लिए भी और पीड़ा नहीं पैदा करते। तुम इस सुन्दर पृथ्वी को, अपने अन्तर-आकाश को, और समस्त मानव चित्त को परेशानी उत्पन्न करनेवाली नकारात्मकता से नहीं दूषित करते हो।

यदि ऐसी परिस्थिति उभरती भी है जिसमें तुम्हें वर्तमान का सामना करना पड़ता है, और यदि वह वर्तमान क्षण के बोध से उभरते हैं तो तुम्हारे कर्म स्पष्ट व प्रभावी होंगे। सम्भवतः अधिक प्रभावशाली होंगे। मन के पूर्व छाप से प्रेरित हुई प्रतिक्रिया नहीं होगी बल्कि परिस्थिति का अंतःस्फुरित उत्तर होगा। दूसरी परिस्थितियों में भी, जहाँ समय बाध्य मन पहले प्रतिक्रिया करता, तुम कुछ न करना अधिक प्रभावशाली पाओगे। केवल वर्तमान में केन्द्रित रहना।

अस्तित्व का उल्लास

अपने को सचेत करने के लिए कि क्या तुमने मानसिक समय को अपने पर हावी होने दिया है, तुम एक साधारण से मापदण्ड का प्रयोग कर सकते हो।

> **स्वयं से पूछो:** मैं जो कर रहा हूँ, क्या उसमें उल्लास, सहजता व चमक है? यदि नहीं, तो समय वर्तमान क्षण को ढँक दे रहा है और जीवन एक बोझ या संघर्ष के जैसा दिख रहा है।

यदि तुम जो कर रहे हो उसमें उल्लास, सहजता व चमक नहीं है तो इसका मतलब यह बिल्कुल नहीं है कि जो तुम कर रहे हो उसे तुम्हें बदलने की ज़रूरत है। केवल 'कैसे' को बदलना ही काफी होगा। 'कैसे' 'क्या' से ज़्यादा महत्वपूर्ण होता है। कोशिश करो कि तुम जो कर रहे हो उस पर ज़्यादा ध्यान दो, ना कि उस पर जो तुम उसे करके पाना चाहते हो। यह क्षण जो कुछ भी प्रस्तुत करता है, उस पर अपना पूरा-पूरा ध्यान दो। इसका अर्थ यह भी है कि जो है तुम उसे पूर्ण रूप से स्वीकार करो, क्योंकि तुम किसी चीज़ को अपना पूरा ध्यान और साथ ही साथ प्रतिरोध, दोनों नहीं दे सकते।

जैसे ही तुम वर्तमान क्षण का सम्मान करते हो, सारी अप्रसन्नता और संघर्ष विलीन हो जाते हैं और जीवन उल्लास व सहजता के साथ प्रवाहित होने लगता है। जब तुम वर्तमान क्षण के बोध से प्रेरित हो कार्य करते हो, तो तुम जो कुछ भी करते हो — सामान्य-सा कार्य भी — वह गुण, देखभाल व प्रेम से सराबोर हो जाता है।

अपने कर्मों के फल के बारे में चिन्तित न हो — केवल अपने कर्म पर ध्यान दो। फल अपने आप ही आ जाएगा। यह एक शक्तिशाली आध्यात्मिक अभ्यास है।

जब वर्तमान से दूर ले जानेवाली विवशता खत्म हो जाती है, तो तुम जो भी करते हो उसमें आत्मा के उल्लास का प्रवाह होता है। जैसे ही वर्तमान में तुम्हारा ध्यान आता है, तुम्हें एक उपस्थिति का, एक प्रशान्तता का, स्तब्धता का अहसास होता है। तुम संतुष्टि व परिपूर्णता के लिए भविष्य पर निर्भर नहीं रहते — तुम मुक्ति के लिए भविष्य का मुँह नहीं ताकते। इसीलिए, तुम्हें फल से मोह नहीं होता। ना ही सफलता या असफलता में तुम्हारी अंतःस्थिति को बदलने की सामर्थ्य ही होती है। तुमने जीवन-परिस्थिति के नीचे दबे जीवन को पा लिया है।

मानसिक समय के अभाव में, तुम्हारा आत्म-बोध आत्मा से उपजता है, ना कि तुम्हारे वैयक्तिक अतीत से। इसलिए, तुम हो, उससे अलग कुछ होने की मानसिक आवश्यकता नहीं रहती। संसार में, जीवन-परिस्थिति के स्तर पर, तुम बहुत धनी, ज्ञानी, सफल, इस-उस से मुक्त हो जाओ, परन्तु आत्मा के गहन पहलू में तुम इस क्षण में भी पूर्ण हो।

बोध की समयातीत स्थिति

जब तुम्हारे शरीर का हर कोशाणु इतना सजग होता है कि वह जीवन से स्पन्दित होने लगता है और जब तुम उस जीवन को आत्मा के आनन्द के रूप में हर क्षण में अनुभव करने लगते हो, तब यह कहा जा सकता है कि तुम समय के बन्धन से मुक्त हो गये हो। समय से मुक्त होने का अर्थ है पहचान के लिए अतीत और परिपूर्णता के लिए भविष्य की

मानसिक ज़रूरत से मुक्त होना है। यह आत्मा के एक ऐसे गूढ़ रूपान्तरण को प्रदर्शित करता है जिसकी तुम कल्पना भी नहीं कर सकते।

> **जब तुम्हें आत्मा की समयातीत स्थिति की कुछ झलक मिल जाती है,** तब तुम समय और उपस्थिति के आयामों में विचरण करने लगते हो। सबसे पहले तुम इस बात के प्रति जागरूक हो जाते हो कि वास्तव में वर्तमान में तुम्हारा कितना कम ध्यान होता है। पर यह जानना कि तुम वर्तमान में नहीं हो, सफलता का काम है: यह बोध ही उपस्थिति है — शुरू में चाहे यह कुछ सेकण्ड के लिए ही क्यों न हो।
>
> फिर, अधिकाधिक बार, तुम भूत या भविष्य में अपना केन्द्रण रखने के बजाए वर्तमान में केन्द्रित होना चुनते हो। और जब भी तुम्हें अनुभूति होती है कि तुम वर्तमान में नहीं हो, तो तुम उसमें कुछ क्षणों के लिए नहीं बल्कि घड़ी समय के आधार पर लम्बे समय तक रह पाते हो।

अतः वर्तमान में दृढ़ता से स्थित होने से पहले, जिसका अर्थ है, तुम्हारे पूर्ण चेतन होने से पहले, तुम कुछ समय तक चेतना व अचेतना, वर्तमान और मन की पहचान की स्थितियों के बीच आते-जाते रहते हो। तुम वर्तमान को खो देते हो और बार-बार वर्तमान में आते भी रहते हो। अन्ततः बोध तुम्हारी आधारभूत स्थिति बन जाती है।

अध्याय चार

अचेतना को विलीन करना

जब जीवन में सबकुछ ठीक-ठाक चल रहा हो तो सामान्य परिस्थितियों में और अधिक चेतना लाना आवश्यक है। ऐसा करके, तुम उपस्थिति की, होने की, शक्ति को बढ़ाते हो। वह तुम्हारे अन्दर व तुम्हारे चारों ओर एक उच्च स्पन्दन के शक्ति क्षेत्र का निर्माण करती है। कोई भी अचेतना, नकारात्मकता, लड़ाई या हिंसा इस क्षेत्र में प्रवेश करके जीवित नहीं रह सकती। ठीक उसी प्रकार जैसे प्रकाश की उपस्थिति में अन्धकार नहीं टिक पाता है।

जब तुम अपने विचारों व संवेगों के साक्षी बनना सीख जाते हो, जो कि वर्तमान में रहने का आवश्यक अंग है, तो तुम साधारण अचेतना के पीछे की 'गतिहीनता' को देख कर शायद हैरान हो जाओगे और तब तुम्हें एहसास होगा कि शायद ही कभी, तुम अपने अन्तर में सहज होते हो।

अपनी सोच के स्तर पर, आँकने, असंतुष्टि और वर्तमान से दूर का मानसिक प्रक्षेप के रूप में तुम बड़े भारी प्रतिरोध को महसूस करोगे। संवेगों के स्तर पर असहजता, तनाव, उक्ताहट व विचलन सभी चीज़ों में प्रवाहित होगी। यह दोनों ही मन के आदतन प्रतिरोधक प्रवृत्ति के पहलू हैं।

उन असंख्य तरीकों का निरीक्षण करो जिनमें असहजता, असन्तुष्टि और तनाव तुम्हारे अन्दर में अनावश्यक आँकने, जो है उसका प्रतिरोध करने और वर्तमान को नकारने के रूप में प्रकट होता है।

जो भी अचेतन है वह तब विलीन हो जाता है जब तुम उस पर चेतना का प्रकाश डालते हो।

जब तुम यह जान जाते हो कि साधारण अचेतना को कैसे विलीन किया जाए, तब तुम्हारी उपस्थिति का प्रकाश, तुम्हारे होने का प्रकाश और अधिक तेजोमय हो उठता है। और फिर तुम्हारे लिए जब कभी भी तुम्हें गहन अचेतना का खिंचाव लगेगा, तुम बड़ी आसानी से उसका सामना कर पाओगे। फिर भी, साधारण अचेतना को शुरू में पहचान पाना इतना आसान नहीं होता, क्योंकि वह इतना सामान्य जो है।

आत्म-निरीक्षण द्वारा अपनी मानसिक व संवेगात्मक स्थिति को

नियन्त्रित करने की आदत बनाएं।

"क्या मैं इस क्षण में हूँ?" यह अपने आप से बार-बार पूछने का एक अच्छा सवाल है।

या तुम पूछ सकते हो: "इस क्षण में मेरे अन्दर क्या चल रहा है?"

अपने अन्दर में जो चल रहा है, कम से कम उसे जानने के इतने उत्सुक तो हो जितना बाहर जो चल रहा है उसे जानने के होते हो। यदि तुम अन्दर को व्यवस्थित कर लो तो बाहर अपने आप ही ठीक को जाएगा। प्राथमिक वास्तविकता अन्दर है, माध्यमिक वास्तविकता बाहर है।

इन प्रश्नों का तुरन्त उत्तर नहीं देना। अपने ध्यान को अन्तर में मोड़ो। अपने अन्तर में झाँको।

तुम्हारा मन किस तरह के विचारों को उत्पन्न कर रहा है?

तुम्हें कैसा महसूस हो रहा है?

अपना ध्यान शरीर की ओर लाओ। क्या वहाँ कोई तनाव है?

एक बार जब तुम पाते हो कि थोड़ी असहजता है, कश्मकश है, तो देखो कि किन तरीकों से तुम जीवन को नकार कर, उसका प्रतिरोध करके व उसे अस्वीकार करके, तुम वर्तमान को नकार रहे हो।

ऐसे बहुत-से तरीके हैं जिनके द्वारा लोग बिन सोचे वर्तमान क्षण का प्रतिरोध करते हैं। अभ्यास के द्वारा, तुम्हारी आत्म-निरीक्षण की, अपनी अन्तर-स्थिति का निरीक्षण करने की शक्ति तीक्ष्ण हो जाएगी।

तुम जहाँ भी हो, पूर्णतः वहीं रहो

क्या तुम तनाव में हो? क्या तुम भविष्य में जाने के लिए इतने व्यस्त हो कि वर्तमान बस वहाँ पहुँचने का साधन बन कर रह गया है? तनाव तब होता है जब 'यहाँ' होने पर 'वहाँ' पहुँचने की चाह होती है या फिर वर्तमान में रहकर भविष्य में पहुँचने की इच्छा होती है। यह एक ऐसा विभाजन है जो तुम्हें अन्दर से चीर देता है।

क्या अतीत तुम्हारा बहुत ध्यान आकर्षित करता है? क्या तुम उसके बारे में, सकारात्मक या नकारात्मक रूप से, बोलते या सोचते हो? तुम्हारी महान उपलब्धियाँ, तुम्हारे रोमांचक किस्से, अनुभव या वे सारी बुरी चीज़ें जो तुम्हारे साथ हुई हों या जब तुम शिकार बने हो, या शायद जो तुमने दूसरे के साथ किया हो?

क्या तुम्हारी विचार-प्रक्रिया अपराधी-भाव, घमण्ड, आक्रोश, गुस्सा, खेद या

आत्मग्लानि को पैदा कर रही है? तब तुम न केवल अपने मन में झूठे आत्मभाव को प्रबल कर रह हो, बल्कि अतीत को संजोकर अपने शरीर को जल्दी बूढ़ा कर रहे हो। इस बात को तुम उन लोगों में सच होता हुआ देख पाओगे जिन्हें अपने अतीत को पकड़े रखना अच्छा लगता है।

> **हर क्षण अतीत के लिए मर जाओ।** तुम्हें उसकी ज़रूरत नहीं है। जब वर्तमान में उसकी ज़रूरत हो तभी उसका उल्लेख करो। इस क्षण में निहित शक्ति का और आत्मा की पूर्णता का अनुभव करो। अपनी उपस्थिति का अनुभव करो।

क्या तुम चिन्तित हो? क्या तुम्हारे मन में 'ऐसा हुआ तो' जैसे बहुत से विचार हैं? तुम अपने मन से जुड़े हुए हो, जो कि काल्पनिक भविष्य में खुद को देख रहा है और भय को पैदा कर रहा है। किसी भी दशा में तुम ऐसी परिस्थिति का सामना नहीं कर सकते क्योंकि उसका अस्तित्व ही नहीं है? वह एक मानसिक छायाभास है।

वर्तमान क्षण को स्वीकार करके तुम इस स्वास्थ्य व जीवन उजाड़नेवाले पागलपन को रोक सकते हो।

> **अपनी श्वास-प्रश्वास के प्रति जागरूक हो जाओ।** वायु को अपने शरीर के अन्दर व बाहर आता-जाता महसूस करो। अपनी अंतःशक्ति क्षेत्र को महसूस करो। वास्तविक जीवन में, मन की काल्पनिक बातों के बजाए, तुम्हें केवल वर्तमान क्षण का सामना करना होता है।
>
> अपने आपसे पूछो कि इस क्षण में तुम्हें क्या 'परेशानी' है। अगले साल नहीं, कल नहीं, पाँच मिनट बाद भी नहीं। इस क्षण में क्या गड़बड़ है?

तुम वर्तमान क्षण का हरदम सामना कर सकते हो, पर भविष्य का कभी नहीं, ना ही ज़रूरत है। जब तुम्हें ज़रूरत है तो जवाब, सामर्थ्य, सही कर्म व साधन सभी मौजूद होंगे, उससे पहले नहीं, ना ही बाद में।

क्या तुम आदतन 'प्रतीक्षक' हो? जीवन का कितना समय तुम इन्तज़ार करने में गँवा देते हो? पोस्ट-ऑफिस की लाइन में, ट्रैफिक जाम में, हवाई अड्डे में, किसी के आने के लिए या काम खत्म करने के लिए इन्तज़ार करने को मैं 'छोटा इन्तज़ार' कहता हूँ। 'लम्बे स्तर का इन्तज़ार' होता है अगली छुट्टियों का, अच्छी नौकरी का, बच्चों के बड़े हो जाने का, अर्थपूर्ण रिश्तों को पाने का, सफलता का, पैसे बनाने का, महत्त्वपूर्ण बनने का, आत्म-साक्षात्कारी बनने का इन्तज़ार करना। यह कोई असामान्य बात नहीं है कि, 'जीवन जीना' शुरू करने की प्रतीक्षा में लोग अपना पूरा जीवन निकाल देते हैं।

इन्तज़ार करना मन की स्थिति है। इसका अर्थ है कि तुम भविष्य चाहते हो; तुम्हें वर्तमान नहीं चाहिए। जो तुम्हारे पास है वह तुम्हें नहीं चाहिए और जो नहीं है वह चाहिए। हर इन्तज़ार के साथ तुम अनजाने में अपने अभी व वर्तमान में, जहाँ तुम नहीं होना चाहते

हो तथा कल्पित भविष्य, जहाँ तुम होना चाहते हो, में एक अन्तर-द्वन्द्व पैदा कर देते हो। वर्तमान के खोने से तुम्हारे जीवन की गुणवत्ता भी कम हो जाती है।

उदाहरण के लिए, बहुत लोग समृद्धि की प्रतीक्षा कर रहे हैं। वह भविष्य में नहीं आयेगी। जब तुम वर्तमान वास्तविकता का सम्मान करते हो, उसे पूर्ण रूप से स्वीकार करते हो — तुम जहाँ हो, जो हो, जो तुम इस क्षण में कर रहे हो — जब तुम्हारे पास जो है उसे तुम पूर्णतः स्वीकार करते हो, तब तुम जो तुम्हारे पास है उसके लिए कृतज्ञ होते हो, जो है उसके लिए कृतज्ञ, आत्मा के लिए कृतज्ञ। वर्तमान क्षण के लिए और जीवन की परिपूर्णता के लिए कृतज्ञता सच्ची समृद्धि है। वह भविष्य में नहीं आ सकती। और समय के साथ यह समृद्धि तुम्हारे जीवन में अनेक रूप में प्रकट होती है।

यदि जो तुम्हें मिला है उससे तुम असंतुष्ट हो, या फिर हताश हो या अपनी वर्तमान कमी से क्रोधित हो, तो वह तुम्हें धनी होने के लिए अभिप्रेरित कर सकता है, परन्तु तुम अगर करोड़ों बना भी लो, तुम अन्तर में कमी महसूस करते रहोगे और अपने हृदय में अपूर्णता अनुभव करोगे। तुम्हें ऐसे अनेक रोमांचक अनुभव होंगे कि पैसा क्या नहीं खरीद सकता, परन्तु आते-जाते रहेंगे और तुम्हें सदा ही खालीपन से भर देंगे और शारीरिक या मानसिक पूर्णता की चाह से भर देंगे। तुम आत्मा में अवस्थित नहीं होगे और इसलिए इस क्षण में जीवन की पूर्णता को अनुभव करना ही सच्ची समृद्धि है।

> **मन की प्रतीक्षा करने की स्थिति को त्याग दो।** जब तुम अपने को प्रतीक्षा करने की स्थिति में खिसकता हुआ पाओ...तुरन्त बाहर आ जाओ। वर्तमान क्षण में आ जाओ। बस रहो और होने का आनन्द लो। यदि तुम वर्तमान में हो, तो तुम्हें कभी किसी चीज़ के लिए प्रतीक्षा करने की ज़रूरत नहीं पड़ेगी।
>
> तो अगली बार कोई कहे, ‘माफ करना, तुम्हें इन्तज़ार करना पड़ा,’ तुम जवाब दे सकते हो, ‘कोई बात नहीं, मैं इन्तज़ार नहीं कर रहा था। मैं यहाँ खड़े होकर आनन्द ले रहा था — आत्मा का आनन्द’।

वर्तमान क्षण को नकारने के लिए ये मन की कुछ स्वाभाविक युक्तियां हैं जो सामान्य अचेतना का भाग है। सामान्य जीवन का हिस्सा होने के कारण उन्हें आसानी से अनदेखा किया जा सकता है। ये असंतुष्टि की चखचख है। परन्तु जितना अधिक तुम अपनी अन्तर मानसिक व संवेगात्मक स्थिति का निरीक्षण करोगे, तो तुम्हारे लिए यह जानना आसान हो जाएगा कि तुम भूत या भविष्य में फँसे हो। इसका मतलब है कि अचेतन हो और फिर समय-स्वप्न से जाग कर वर्तमान में आना तुम्हारे लिए सरल होगा।

ध्यान रहे! मन से पहचान रखनेवाला झूठा, नाखुश आत्मा समय पर जीवित है। उसे पता है कि वर्तमान क्षण उसके लिए मृत्यु है और इसलिए वह उससे आतंकित रहता है। वह तुम्हें उससे बाहर लाने के लिए कुछ भी करेगा। वह तुम्हें समय में उलझा रहने देगा।

एक तरीके से, उपस्थिति की आस्था की तुलना, प्रतीक्षा करने से की जा सकती है। यह एक अलग प्रकार की प्रतीक्षा होती है जिसमें पूर्ण सजगता चाहिए होती है। कुछ भी

कभी भी हो सकता है और यदि तुम पूर्ण जाग्रत नहीं हो, पूर्ण स्थिर नहीं हो, तुम उसे चूक सकते हो। उस स्थिति में, तुम्हारा सारा ध्यान वर्तमान क्षण में होता है। ज़रा-सा भी सोचने, याद करने, प्रतीक्षा करने या कपोल-कल्पना करने के लिए बचा नहीं होता। उसमें न तो काई तनाव होता है, ना ही भय, केवल सजग उपस्थिति। तुम अपने सम्पूर्ण अस्तित्व से, अपने शरीर के हर एक कोषाणु के साथ उपस्थित होते हो।

उस स्थिति में, 'तुम' जिसका भूत व भविष्य है, कोई व्यक्तित्व है, दिखाई ही नहीं देता। फिर भी कुछ मूल्यवान नहीं खो जाता। तुम अब भी वही होते हो। वास्तव में, अब तुम अधिक तुम होते हो या फिर अब तुम वास्तव में स्वयं होते हो।

तुम्हारी उपस्थिति में
अतीत नहीं टिक सकता

अपने अन्तर में अचेतन अतीत के बारे में तुम कुछ भी जानना चाहते हो, वर्तमान की चुनौतियाँ उसे बाहर ले आयेंगी। यदि तुम अतीत की जाँच-पड़ताल करोगे तो वह एक अन्तहीन गड्ढे जैसा बन जाएगाः वहाँ अधिक से अधिक मिलेगा। तुम्हें शायद लगे कि अतीत को समझने के लिए और उससे मुक्त होने के लिए तुम्हें थोड़ा और समय चाहिए, या फिर दूसरे शब्दों में, भविष्य तुम्हें अतीत से मुक्त करायेगा। यह भ्रम है। केवल वर्तमान ही तुम्हें अतीत से मुक्त कर सकता है। अधिक समय तुम्हें समय से मुक्त नहीं कर सकता।

वर्तमान की शक्ति को अपनाओ। यह कुंजी है। वर्तमान की शक्ति तुम्हारी उपस्थिति की शक्ति है, वह तुम्हारी जागरूकता है जो विचारों से मुक्त हो चुकी है। अतः वर्तमान के स्तर पर अतीत का सामना करो। जितना अधिक ध्यान तुम अतीत पर देते हो उसे उतनी अधिक शक्ति मिलेगी और सम्भवतः तुम उसे 'आत्मा' के रूप में भी समझने लग सकते हो।

इसे गलत मत समझो: ध्यान ज़रूरी है, लेकिन अतीत के रूप में अतीत का नहीं। वर्तमान पर ध्यान दो; अपने व्यवहार, प्रतिक्रियाओं, मिज़ाज, विचारों, संवेगों, भय व इच्छाओं पर ध्यान दो। तुममें अतीत है। यदि इन सब चीज़ों पर नज़र रखने के लिए, आलोचनात्मक या विश्लेषी रूप में नहीं, बल्कि तटस्थ रूप में उपस्थित रह सकते हो, तब तुम अतीत का सामना कर रहे होते हो और अपनी उपस्थिति की शक्ति से उसे विलीन कर रहे होते हो।

अतीत में जा कर तुम स्वयं को नहीं पा सकते। वर्तमान में आ कर तुम अपने आपको पा सकते हो।

अध्याय पाँच

तुम्हारी उपस्थिति की प्रशान्ति में सुन्दरता का उदय होता है

सुन्दरता, भव्यता और प्रकृति की पवित्रता के प्रति जागरूक होने के लिए उपस्थिति की आवश्यकता होती है। क्या तुमने कभी रात में आकाश के अन्तहीन विस्तार को निहारा है और उसकी परम स्तब्धता और अकल्पनीय विस्तार द्वारा विस्मयाविभूत हुए हो? क्या तुमने सुना है, सच में सुना है, जंगल में पर्वत से बहने वाले झरने को? या गर्मी की ढलती साँझ में किसी कोयल की कूक को?

ऐसी चीज़ों के प्रति जागरूक होने के लिए, मन का शान्त होना ज़रूरी है। तुम्हें भूत और भविष्य को, अपनी परेशानियों के बोझ को दरकिनार करना होता है, साथ ही अपने समस्त ज्ञान को भी; वरना, तुम देखोगे पर सुनोगे नहीं, सुनोगे पर पूरी तरह से सुनोगे नहीं। तुम्हारी सम्पूर्ण उपस्थिति की आवश्यकता है।

> **बाह्य रूपों की सुन्दरता के परे भी बहुत कुछ है;** कुछ जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता, जो गहन, आन्तरिक, पवित्र अंश है, जिसका कोई नाम नहीं है। जहाँ कहीं भी, जब कभी भी सुन्दरता होती है, यह अन्तर-सार कैसे भी प्रकाशित हो उठता है। जब तुम वर्तमान में होते हो तब ही यह स्वयं को प्रकट करता है।
>
> क्या ऐसा हो सकता है कि यह नामरहित सार और तुम्हारी उपस्थिति दोनों एक ही हैं?
>
> क्या तुम्हारी उपस्थिति के बिना यह होगा?
>
> इसकी गहराई में जाओ। स्वयं के लिए पता करो।

विशुद्ध चेतना को पाना

जब तुम मन का निरीक्षण करते हो, तुम मानसिक रूपों से अपनी चेतना को हटा देते हो, जो फिर द्रष्टा या साक्षी बन जाती है। परिणामतः द्रष्टा — रूप-आकार के परे की शुद्ध चेतना — और सशक्त बन जाती है और मानसिक ढाँचे कमज़ोर पड़ जाते हैं।

जब हम मन को देखने की बात करते हैं, तो हम एक ऐसी घटना को वैयक्तिक बना रहे हैं जो वास्तव में ब्रह्मण्डीय महत्त्व की है: तुम्हारे द्वारा, चेतना रूपाकार की अपनी पहचान के स्वप्न से जाग रही है और रूपाकार से अपने को अलग कर रही है। यह भविष्यवाणी है उस घटना की जो शायद कालक्रम के अनुसार निकट भविष्य में होनेवाली है, पर उसका हिस्सा भी है। यह घटना है — संसार का अन्त।

> **रोज़मर्रा के जीवन में उपस्थित होने के लिए,** अन्तर में गहरे पैठने की आवश्यकता होती है; वरना मन, जिसमें अतुलनीय वेग है, एक अनियन्त्रित नदी के समान तुम्हें बहा ले जाएगा।
>
> इसका अर्थ है अपने शरीर में पूर्णतः रहना। अपने ध्यान के थोड़े हिस्से को हरदम शरीर की अंतःशक्ति क्षेत्र पर रखना। माने अन्तर से शरीर को महसूस करना। दैहिक बोध तुम्हें वर्तमान में रखता है। वर्तमान में जमाए रखता है।

यह शरीर, जो तुम देख व छू सकते हो, वह तुम्हें आत्मा तक नहीं ले जा सकता। परन्तु यह दृश्यमान व स्पर्शनीय शरीर केवल बाहरी खोखा है या फिर गहनतम् वास्तविकता का सीमित व विकृत रूप है। आत्मा से जुड़ाव की तुम्हारी स्वाभाविक स्थिति में, इस गहनतम वास्तविकता के हर क्षण में अदृश्य अन्तर-शरीर, अन्तर में स्फूर्तिदायी उपस्थिति के रूप में अनुभव किया जा सकता है। अतः 'शरीर में रहने' का अर्थ है — अन्दर से शरीर को महसूस करना, शरीर के अन्दर जीवन को महसूस करना और इस तरह यह जान लेना कि तुम बाह्य रूप के परे हो।

जब तक तुम्हारा मन तुम्हारे सारे ध्यान को निगलता रहेगा तुम आत्मा से अलगाव महसूस करोगे। जब यह होता है — जो बहुत से लोगों के लिए निरन्तर होता है — तुम अपने शरीर में नहीं होते। मन तुम्हारी समस्त चेतना को सोख लेता है और मानसिक कार्यों में बदल देता है। तुम सोचना बन्द नहीं कर पाते हो।

आत्मा के प्रति सजग होने के लिए, तुम्हें मन से अपनी चेतना को वापस पाना है। तुम्हारी आध्यात्मिक यात्रा में यह एक बहुत ही आवश्यक कार्य है। ऐसा होने से बड़ी मात्रा में चेतना उन्मुक्त हो जाएगी जो पहले बेकार की व बाध्यकारी सोच में लगी हुई थी। ऐसा करने का एक बहुत ही सशक्त तरीका है कि तुम बस अपने ध्यान का केन्द्रण सोचने से हटाकर शरीर में लगा दो, जहाँ तुरन्त ही तुम्हें आत्मा की अदृश्यकारी शक्ति के रूप में आभास होगा। यह वह शक्ति है जो तुम्हारे भौतिक शरीर को जीवन देती है।

अन्तर देह से जुड़ना

कृपया अभी इसका अभ्यास करो। इस अभ्यास के लिए तुम्हें अपनी आँखें बन्द करना अच्छा लगे। बाद में, जब 'शरीर में होना' सहज व स्वाभाविक लगेगा तब इसकी ज़रूरत

नहीं होगी।

शरीर की ओर अपना ध्यान लाओ। अन्दर से महसूस करो। क्या वह जीवित है? क्या तुम्हारे हाथों में, पैरों में, तुम्हारी पसलियों में, सीने में जीवन है?

क्या तुम उस सूक्ष्म शक्ति क्षेत्र को महसूस कर सकते हो जो तुम्हारे पूरे शरीर में व्याप्त है और जो हर अंग व हर कोषाणु को नवजीवन देती है? क्या तुम अपने शरीर के सभी भागों में, एक साथ, एक शक्ति के रूप में इसे महसूस कर सकते हो?

कुछ क्षणों के लिए अन्तर-शरीर की भावना पर केन्द्रित रहो। उसके बारे में सोचो मत। महसूस करो।

जितना अधिक ध्यान तुम उसे देते हो, उतना ही स्पष्ट व दृढ़ यह भावना बन जाएगी। ऐसा लगेगा मानो तुम्हारा हर कोषाणु अधिक जीवन्त हो उठा हो और यदि तुम्हारी कल्पनाशक्ति तीव्र है, तो शायद तुम्हें तुम्हारा शरीर अधिक देदीप्यमान दिखेगा। यद्यपि यह चित्र अस्थाई रूप से तुम्हारी मदद कर सकता है, पर तुम चित्र के बनाए उस भावना पर ज़्यादा ध्यान दो जो अन्तर से उभर रही है। एक चित्र, चाहे वह कितना ही सुन्दर व शक्तिपूरित हो, वह आकार में बंधा है, इसलिए उसमें गहरे उतरने की इतनी गुंजाइश नहीं है।

शरीर में गहरे उतरना

शरीर में और गहरा उतरने के लिए इस ध्यान का अभ्यास करो। घड़ी समय के दस-पन्द्रह मिनट काफ़ी होंगे।

सबसे पहले यह सुनिश्चित करो कि कोई भी बाहरी रुकावटें ना हों, जैसे फोन या फिर वे लोग जो तुम्हें शायद हस्तक्षेप करें। कुर्सी में बैठो, पर उसमें पीछे सटो नहीं। अपनी रीढ़ की हड्डी को सीधा रखो। ऐसा करने से तुम सजग रह पाओगे। या फिर ध्यान के लिए अपना कोई प्रिय स्थान चुन लो।

अपने शरीर को तनावमुक्त रखो। आँखों को बन्द कर लो। कुछ गहरी साँसें लो। ऐसा महसूस करो कि मानों तुम अपने उदर के निचले हिस्से में सांस भर रहे हो। हर श्वास-प्रश्वास के साथ वह कैसे फैलती व सिकुड़ती है — इस पर ध्यान दो।

अब शरीर की समस्त अन्तर शक्ति क्षेत्र के प्रति जागरूक हो जाओ। उसके बारे में सोचो नहीं — महसूस करो। ऐसा करने से तुम मन से

अपनी चेतना को वापस पा लोगे। यदि तुम्हें मददगार साबित हो तो जैसा मैंने वर्णित किया है तुम 'प्रकाश' के दृष्टान्त को प्रयोग कर सकते हो।

जब तुम्हें अन्तर शरीर, एक शक्ति क्षेत्र के जैसा भासमान हो, तब हो सके तो कोई भी चित्र को छोड़ कर, भावना पर अपना पूरा केन्द्रण लाओ। यदि हो सके तो भौतिक शरीर का मानसिक चित्र यदि हो तो उसे भी छोड़ दो। अब केवल सर्वत्र-व्याप्त उपस्थिति शेष बचती है और ऐसा लगता है मानों अन्तर-शरीर की कोई सीमा नहीं है।

अब अपने ध्यान को इस भावना में और गहरे ले जाओ। उसके साथ एक हो जाओ। शक्ति क्षेत्र के साथ लय हो जाओ, जिससे कि द्रष्टा व दृष्ट की, तुम व तुम्हारे शरीर का भासमान द्वैत न रहे। अन्दर व बाहर की दूरी भी विलीन हो जाती है और अब अन्तर शरीर भी नहीं रहता। शरीर में गहरे जाने से, तुम शरीर के पार चले गये हो।

जब तक सहज व आरामदायी लगे, शुद्ध आत्मा के इस लोक में बने रहो। फिर अपने भौतिक शरीर, श्वास और भौतिक इन्द्रियों के प्रति जागरूक हो जाओ और आँखें खोल दो। ध्यानस्थ तरीके से अपने चारों ओर देखो — यानी मानसिक रूप से बिना टिप्पणी किए — और ऐसा करते हुए अन्तर शरीर को महसूस करो।

इस रूप से परे लोक में पहुँचना वास्तव में मुक्तिदायी है। यह तुम्हें रूप के बन्धन व रूप से पहचान से मुक्त कर देता है। हम इसे अप्रकट कहते हैं, सभी चीज़ों का अदृश्य स्रोत। यह गहना स्तब्धता व प्रशान्ति का लोक है, साथ ही उल्लास और गहन जीवन। जब भी तुम वर्तमान में होते हो, तो तुम प्रकाश, शुद्ध चेतना जो इस स्रोत से प्रसारित होती है, से कुछ हद तक 'पारदर्शी' हो जाते हो। तुम्हें यह भी अहसास होता है कि तुम प्रकाश से अलग नहीं हो, बल्कि वह तुम्हारे सार का ही अंश है।

जब तुम्हारी चेतना बाह्यमुखी होती है तो मन व संसार का उदय होता है। जब वह अन्तर की ओर मुड़ती है तो वह अपने स्रोत को पा लेती है और वह वापस अप्रकट में मिल जाती है।

फिर जब तुम्हारी चेतना प्रकट जगत में वापस आती है तो उस रूप की पहचान को वापस अपना लेते हो जो तुमने अस्थाई रूप से छोड़ दी थी। तुम्हारा नाम है, एक अतीत है, एक जीवन परिस्थिति है, एक भविष्य है। परन्तु एक आवश्यक पहलू में तुम पहलेवाले व्यक्ति नहीं हो: तुमने अपने अन्तर में एक ऐसी वास्तविकता को देखा हुआ है जो कि 'इस संसार की नहीं होती,' यद्यपि वह उससे अलग नहीं है, वैसे ही जैसे वह तुमसे अलग नहीं हो।

अब इसे अपना आध्यात्मिक अभ्यास बना लो:

अपने जीवन के क्रियाकलापों के दौरान, बाह्य जगत व मन को अपना

सौ प्रतिशत ध्यान न दो। थोड़ा अन्तर में रखो।

रोज़मर्रा का काम करते हुए, खासतौर पर रिश्तों या प्रकृति के सान्निध्य में, अपने अन्तर-शरीर को महसूस करो। अन्तर में गहरी स्तब्धता का अनुभव करो। प्रवेश द्वार को खुला रखो।

अपने पूरे जीवन के दौरान अप्रकट के प्रति जागरूक रहना काफ़ी सम्भव है। तुम इसे हर चीज़ के पीछे छिपी प्रशान्ति के रूप में अनुभव करते हो। ऐसी स्थिरता जो तुम्हें कभी नहीं छोड़ेगी चाहे बाहर कुछ भी क्यों न हो। तुम अप्रकट और प्रकट, भगवान व संसार के बीच का सेतू बन जाते हो।

स्रोत से जुड़ाव की इस स्थिति को साक्षात्कार कहते हैं।

अन्तर में गहरे जुड़े रहो

मुख्य बात है अपनी अन्तर देह के साथ हर समय स्थाई रूप से जुड़े रहने की स्थिति में रहना, उसका अनुभव करना है। यह शीघ्र ही गहरा होता जाएगा और तुम्हारे जीवन को रूपान्तरित कर देगा। जितनी अधिक चेतना तुम अपनी अन्तर-देह की ओर भेजोगे, उसके स्पन्दन उतने ही उच्च हो जाएँगे; वैसे ही जैसे तुम्हारे डिमर स्विच को बढ़ाने पर प्रकाश और भी अधिक तेज़ हो जाता है। शक्ति के इस उच्चतम स्तर पर नकारात्मकता तुम्हें छू भी नहीं पाएगी तथा तुम उन नयी परिस्थितियों को अपनी ओर आकर्षित कर पाओगे जो इस उच्चतम स्पन्दनों को प्रतिबिम्बित करती हैं।

यदि तुम अपने ध्यान को अधिक से अधिक शरीर में रखोगे तो तुम वर्तमान में दृढ़ता से स्थित हो जाओगे। तुम स्वयं को बाहरी संसार में नहीं खोओगे और ना ही अपने मन में ही खोता हुआ पाओगे। विचार और संवेग, डर व इच्छाएँ एक हद तक शायद रहें, पर वे तुम्हारे पर हावी नहीं होंगे।

कृपया ध्यान दें कि इस क्षण में तुम्हारा ध्यान कहाँ है। तुम मुझे सुन रहे हो या इस किताब के शब्दों को पढ़ रहे हो, यह तुम्हारे ध्यान का केन्द्रण है। तुम अपने चारों ओर, दूसरे लोग इत्यादि के प्रति जागरूक होगे। साथ ही तुम जो सुन रहे हो या पढ़ रहे हो, उससे सम्बन्धित कुछ मानसिक क्रिया या फिर मानसिक टीका-टिप्पणी भी हो रही होगी।

फिर यह ज़रूरी नहीं है कि ये सारी चीज़ें तुम्हारा पूरा ध्यान खींच लें। देखो कि क्या तुम इन सबके साथ अपनी अन्तर देह से सम्पर्क रख सकते हो। थोड़ा ध्यान अन्तर में रखो। सारा केवल बाहर नहीं बह जाने दो। शक्ति के एक क्षेत्र के रूप में अन्तर से अपने पूरे शरीर का अनुभव करो।

यह ऐसा है कि मानो तुम अपने पूरे शरीर से सुन व पढ़ रहे हो। आनेवाले दिनों और हफ्तों में इसे अपना अभ्यास बना लो।

बाहरी संसार और मन में अपना सारा ध्यान न लगा दो। जो कर रहे हो उस पर ज़रूर ध्यान दो, पर जब भी हो सके इसके साथ अन्तर-देह को भी महसूस करते रहो। अन्तर में गहरे जुड़े रहो। फिर निरीक्षण करना कि यह तुम्हारी चेतना की स्थिति व तुम जो कर रहे हो उसकी गुणता को कैसे बदल देता है।

मैं जो कह रहा हूँ उसे बस स्वीकार या अस्वीकार न कर दो। उसकी सच्चाई को ज़रूर परखना।

प्रतिरक्षण तन्त्र को सशक्त करना

जब कभी तुम्हें अपने प्रतिरक्षण तन्त्र (ईम्यून सिस्टम) को शक्तिपूरित करने की ज़रूरत महसूस हो तो तुम एक बहुत ही आसान, पर शक्तिशाली आत्म-संधान ध्यान कर सकते हो। यह तब ज़्यादा प्रभावकारी होता है जब बीमारी के पहले लक्षण दिखते ही इसका इस्तेमाल किया जाए। परन्तु यह उन बीमारियों में भी काम करता है जो शरीर में बैठ चुकी हैं, पर तब तुम्हें इसे अधिक तीव्रता से व बार-बार करना होगा। तुम्हारी शक्ति क्षेत्र में यदि कोई नकारात्मकता उभरती है तो यह उसका भी सामना करके उसे निष्प्रभावी बनाएगा।

यह कोई हर क्षण में शरीर में होने के अभ्यास के एवज में नहीं है। क्योंकि ऐसा करोगे तो इसका प्रभाव बहुत कम समय के लिए रहेगा। ध्यान इस प्रकार से है।

जब तुम कुछ मिनटों के लिए खाली हो, खासतौर पर रात को सोने के ठीक पहले और सुबह उठने से पहले, अपने शरीर को 'चेतना' से भर दो। आँखें बन्द कर लो। अपनी पीठ पर लेट जाओ। पहलेपहल अपने शरीर के अलग-अलग हिस्सों पर अपना ध्यान लाओ: हाथ, पैर, बाँह, तलुआ, उदर, सीना, सिर इत्यादि। इन हिस्सों में जितना हो सके उतनी तीव्रता से जीवन शक्ति को महसूस करो। हर हिस्से पर कम से कम पन्द्रह सेकेण्ड केन्द्रित रहो।

फिर एक लहर की तरह, सिर से पैर तक अपने पूरे शरीर पर ध्यान को ले जाओ। इसे एक मिनट में कर लो। इसके बाद, अपने अन्तर शरीर को उसकी समग्रता में, शक्ति की एक क्षेत्र के रूप में अनुभव करो। कुछ मिनटों के लिए यह एहसास बनाए रखो।

इस पूरे समय के दौरान सजगता से उपस्थित रहो, अपने शरीर के हर कोषाणु में उपस्थित रहो।

यदि तुम्हारा मन तुम्हें कभी-कभार शरीर के बाहर ले आए और तुम अपने आपको विचार में उलझा हुआ पाओ तो उसके बारे में चिन्ता मत करना। जब तुम्हें पता लगे कि ऐसा हो रहा है, बस अपने ध्यान को पुनः अन्तर शरीर पर ले आओ।

मन का रचनात्मक उपयोग

यदि तुम्हें किसी विशिष्ट उद्देश्य के लिए मन का उपयोग करना है तो उसे अन्तर शरीर के साथ करो। यदि तुम बिना विचार के सजग हो सकते हो, केवल तब ही तुम अपने मन को रचनात्मक रूप में उपयोग कर पाओगे और इस स्थिति में प्रवेश करने का सबसे सरल तरीका है तुम्हारा शरीर।

> **जब कभी कोई उत्तर, उपाय या रचनात्मक युक्ति चाहिए,** तो अपने अन्तर शक्ति क्षेत्र पर ध्यान केन्द्रित करते हुए एक क्षण के लिए सोचना बन्द कर दो। स्तब्धता के प्रति जागरूक हो जाओ।

जब तुम वापस सोचना शुरू करोगे तो वह नया व रचनात्मक होगा। किसी भी विचार-क्रिया में, कुछ एक मिनट के बाद सोचने और एक प्रकार के अन्दर से सुनने, अन्तर-स्थिरता के बीच आते-जाते रहने की आदत-सी बना लो।

हम कह सकते हैं: केवल अपने सिर से मत सोचो, पूरे शरीर से सोचो।

श्वास से अपने आपको शरीर में ले जाओ

यदि तुम्हें कभी भी अन्तर देह से सम्पर्क करना मुश्किल लगे; तो पहले श्वास पर ध्यान केन्द्रित करना तुम्हें आसान लगेगा। जागरूक रूप से सांस लेना, जो अपने आपमें एक शक्तिशाली ध्यान है, तुम्हें धीरे-धीरे शरीर के सम्पर्क में ले आयेगा।

> **अन्दर व बाहर आती-जाती श्वास पर अपना ध्यान लाओ।** शरीर में श्वास लो और हर श्वास-प्रश्वास के साथ अपनी पसलियों को हल्का-सा फैलता व सिकुड़ता महसूस करो। यदि तुम्हारे लिए दृश्य देखना आसान है तो अपनी आँखें बन्द कर लो और स्वयं को प्रकाश से घिरा पाओ या फिर किसी प्रकाश से भरी चीज़ में सराबोर पाओ — चेतना का सागर। उस प्रकाश में सांस लेते रहो। उस तेजोमय चीज़ को तुम्हारे पूरे शरीर को भर देने दो और खुद को भी तेजोमय होता हुआ देखो।

फिर धीरे से अपना केन्द्रण भावना पर ज़्यादा ले आओ। किसी भी दृष्टान्त में न अटक जाओ। अब तुम अपने शरीर में हो। तुमने वर्तमान की शक्ति को पा लिया है।

भाग दो

सम्बन्ध को बनाओ आध्यात्मिक अभ्यास

प्रेम आत्मा की स्थिति है।
तुम्हारा प्रेम बाहर नहीं है; तुम्हारे अन्तर में गहरे है।
तुम उसे कभी खो नहीं सकते; और वह तुम्हें कभी छोड़ नहीं सकता।
वह किसी अन्य शरीर पर, किसी बाहरी रूप पर निर्भर नहीं है।

अध्याय छः

पीड़ा-देह को लुप्त कर देना

मानव-पीड़ा का एक बड़ा हिस्सा व्यर्थ ही होता है। जब तक अजागरूक मन जीवन में उथल-पुथल करता रहता है, वह स्व-निर्मित है। वर्तमान में तुम जिस भी दर्द को पनपने देते हो वह किसी न किसी तरह की चीज़ों को अस्वीकारने की भावना है, जो है उसके प्रति अनजाना प्रतिरोध है।

विचार के स्तर पर, वह नकारात्मकता का रूप है। जितना अधिक तुम वर्तमान का प्रतिरोध करते हो, उतनी अधिक पीड़ा होती है और यह सब इस पर निर्भर करता है कि तुम अपने मन से कितना अधिक जुड़े हो। मन हरदम वर्तमान को नकारने और उससे बच निकलने के उपाय खोजता रहता है।

दूसरे शब्दों में, जितनी अधिक तुम्हारी मन के साथ पहचान है, उससे जुड़ाव है, उतना अधिक तुम्हें दर्द होता है। या तुम इसे ऐसे भी देख सकते हो: जितना अधिक तुम वर्तमान को सम्मान देते हो, उसे स्वीकार करते हो, उतना अधिक तुम पीड़ा से, क्लेश से मुक्त रहते हो — अपने अहम् युक्त मन से स्वतन्त्र रहते हो।

कुछ आध्यात्मिक सिखावनियां बताती हैं कि आखिरकार समस्त पीड़ा एक भ्रम है और यह बात सच है। प्रश्न अब यह है: क्या यह तुम्हारे लिए सच है? केवल मान लेने से वह सच नहीं हो जाता। क्या तुम जीवन भर दर्द का एहसास करना चाहते हो और यह भी कहना चाहते हो कि वह भ्रम है? क्या वह तुम्हें पीड़ा से मुक्त कर देगा? हमें जिस बात से सरोकार है वह है कि तुम किस तरह से इस सच का अनुभव कर सकते हो — कैसे उसे अपना वास्तविक अनुभव बना सकते हो।

जब तक तुम अपने मन से पहचान बनाए रखोगे, जिसका अर्थ है कि जब तक तुम आध्यात्मिक रूप से अजागरूक रहोगे, जब तक पीड़ा को नहीं हटाया जा सकता, वह अनिवार्य है। यहाँ पर मैं मुख्यतः संवेगनात्मक पीड़ा के बारे में बात कर रहा हूँ, जो कि शारीरिक पीड़ा और शारीरिक बीमारियों की भी जड़ है। नाराज़गी, नफ़रत, आत्म-तरस, अपराधी-भाव, क्रोध, निराशा, जलन, इत्यादि और यहाँ तक थोड़ा-सा चिड़चिड़ापन, पीड़ा के अनेक रूप हैं। हर सुख और संवेगनात्मक उत्कर्ष अपने में पीड़ा के बीज लिये होता है: जो कि उसका विपरीत भाव है और समय के साथ वह प्रकट होता ही है।

उन लोगों ने जिन्होंने 'हाई', उत्कर्ष का, अनुभव करने के लिए नशीले पदार्थ लिये हैं, जानते हैं कि वह 'हाई' कुछ समय में ही खराब या निम्न अनुभव में बदल जाता है, सुख किसी न किसी प्रकार के दुःख में बदल जाता है। बहुत-से लोग स्वयं अपने अनुभव से जानते हैं कि एक घनिष्ठ सम्बन्ध कितनी आसानी और जल्दी से पीड़ा में बदल जाता है। सर्वोच्च दृष्टि से देखें तो सकारात्मक व नकारात्मक दोनों ही एक सिक्के के दो पहलू हैं, वे उस पीड़ा का हिस्सा हैं जो कि मन की अहम् से जुड़ी चेतना-स्थिति का अभिन्न अंग है।

तुम्हारी पीड़ा के दो स्तर हैं: वह पीड़ा जो तुम वर्तमान में निर्मित करते हो और अतीत की वह पीड़ा जो अभी भी तुम्हारे मन व शरीर में रहती है।

जब तक तुम वर्तमान की शक्ति को नहीं पा लेते हो, हर भावनात्मक पीड़ा जिसका तुम्हें अनुभव होता है, वह अपने पीछे पीड़ा की छाप छोड़ जाती है और यह तुम्हारे अन्दर में रहने लगती है। वह अतीत के दर्द से एक हो जाती है, जो कि पहले से ही है, और तुम्हारे मन व शरीर में घर कर जाती है। इसमें वह दर्द भी सम्मिलित है जो तुमने एक बच्चे के रूप से अनुभव किया था और जो इस अजागरूक संसार में पैदा होने की वजह से था।

यह संचित दर्द एक नकारात्मक शक्ति क्षेत्र है और वह तुम्हारे मन व शरीर में फैला हुआ है। यदि तुम इसे एक अदृश्य सत्ता के रूप में देखते हो, तो तुम सत्य के काफी निकट पहुँच रहे हो। यह भावनात्मक पीड़ा-देह है।

पीड़ा-देह के दो पहलू हैं: सुप्त व जाग्रत। यह नब्बे प्रतिशत समय सुप्त हो सकता है; परन्तु एक नाखुश व्यक्ति में, यह सौ प्रतिशत जाग्रत हो सकता है। कुछ लोग अपना पूरा जीवन इस पीड़ा-देह से ही जीते हैं, जबकि दूसरे उसका कुछ एक परिस्थितियों जैसे घनिष्ठ रिश्ते, या फिर ऐसी परिस्थितियाँ जो अतीत में कुछ खो जाने या छोड़ दिये जाने से जुड़ी होती हैं, शारीरिक या भावनात्मक चोट इत्यादि, में अनुभव करते हैं।

कुछ भी उसे पैदा कर सकता है, खासतौर पर यदि वह तुम्हारे अतीत की किसी पीड़ा से मिलता-जुलता हो। जब वह सुप्त स्थिति से जाग्रत होने के लिए तैयार होता है तो कोई विचार या तुम्हारे नज़दीक के किसी व्यक्ति की कोई टिप्पणी भी, उसे सक्रिय कर सकती है।

पीड़ा-देह से पहचान को तोड़ना

पीड़ा-देह यह नहीं चाहती कि तुम उसे प्रत्यक्ष देखो या फिर जो वह है उसे उस रूप में देखो। जिस क्षण तुम पीड़ा-देह को देखते हो, अपने अन्दर में उसके शक्ति क्षेत्र को महसूस करते हो, उस पर अपना ध्यान ले कर जाते हो, तो उससे तुम्हारी पहचान खत्म हो जाती है।

चेतना का एक उच्च आयाम जाग्रत हो उठता है। मैं उसे उपस्थिति कहता हूँ। अब तुम उस पीड़ा-देह के साक्षी या द्रष्टा होते हो। इसका अर्थ

है कि अब वह तुम्हारा इस्तेमाल नहीं कर सकती यह दिखाते हुए कि वह तुम हो और वह तुम्हारे द्वारा स्वयं का पोषण नहीं कर सकती है। तुमने अपनी अन्तरतम् शक्ति को पा लिया है।

कुछ पीड़ा-देह डरावने होते हैं परन्तु हानिकारक नहीं होते, उदाहरण के लिए, एक बच्चा जो चीखना ही नहीं छोड़ता। दूसरे कुछ दुर्गुणी व विनाशकारी दैत्य, सच्चे राक्षस। कुछ शारीरिक रूप से हिंसक; व बहुत भावनात्मक रूप से हिंसक होते हैं। कुछ तुम्हारे आस-पास व निकट के लोगों पर आक्रमण करती हैं, और अन्य कई तुम पर हमला कर सकती हैं, उसके मेजबान पर। ऐसा होने पर जीवन के बारे में तुम्हारे विचार व भावनाएँ बहुत नकारात्मक व आत्म-विनाशी हो जाते हैं। बीमारियाँ और दुर्घटनाएँ अक्सर इस तरह होती हैं। कुछ पीड़ा-देह उसके मेजबान को आत्महत्या तक करने पर मजबूर कर देती हैं।

जब तुम्हें लगता है कि तुम उस व्यक्ति को जानते हो और तब भी तुम्हारा एक अज़नबी से, भयानक व्यक्ति से अचानक पहली बार सामना होता है, तो तुम दंग रह जाते हो। महत्त्वपूर्ण बात तो यह है, इसे दूसरों से अपने में देखना ज़्यादा अच्छा है।

अपने में, किसी भी प्रकार की नाखुशी को ढूँढ़ निकालो, हो सकता है पीड़ा देह जाग्रत हो रही हो। यह चिड़चिड़ाहट, अधीरता, खिन्नता, निराशा, चोट, या नुकसान पहुँचाने की इच्छा, क्रोध, अवसाद और सम्बन्धों में नाटकीय ढंग से दरार आदि के रूप में प्रकट हो सकती है। जिस क्षण वह सुप्त अवस्था से जाग्रत हो, उसे उसी क्षण पकड़ लो।

किसी भी सत्ता की तरह, पीड़ा-देह भी जीना चाहती है और वह तब ही जीवित रह सकती है, अगर अनजान रूप में तुम उसके साथ पहचान जोड़ो। फिर वह उठ सकती है, तुम पर हावी हो सकती है, 'तुम बन' सकती है और तुम्हारे द्वारा जी भी सकती है।

उसे तुम से अपना 'भोजन' चाहिए। वह ऐसे किसी भी अनुभव से स्वयं को पोषित करेगी जो उसकी ही जैसी शक्ति से स्पन्दित होता है, कुछ भी जो किसी भी रूप में उस पीड़ा को और बढ़ाएगाः क्रोध, विनाशकता, घृणा, सन्ताप, भावनात्मक नाटक, हिंसा और रोग भी। अतः पीड़ा-देह जब तुम पर हावी हो जाती है, तब वह तुम्हारे जीवन में एक ऐसी परिस्थिति पैदा करेगी जो कि उसकी ही जैसी शक्ति से स्पन्दित है, जिससे कि वह अपना पोषण कर सके। पीड़ा पीड़ा पर ही जी सकती है। पीड़ा हर्ष से नहीं पोषित हो सकती। उसे वह अपचनकारी लगता है।

एक बार पीड़ा-देह तुम पर काबु कर लेती है, तो वह और पीड़ा चाहती है। तुम या तो शिकार या अपराधी बन जाते हो। तुम पीड़ा देना चाहते हो, या फिर खुद पीड़ा झेलना चाहते हो या फिर दोनों ही चाहते हो। वैसे दोनों में ज़्यादा फ़र्क नहीं है। तुम्हें पता नहीं है और तुम यह दावा भी करोगे कि तुम्हें पीड़ा नहीं चाहिए। परन्तु ज़रा निकट से देखना और तुम पाओगे कि तुम्हारी सोच और व्यवहार दोनों ही, अपने व दूसरों के लिए पीड़ा देते रहने के लिए बने हैं। यदि तुम वास्तव में सचेत हो, तो वह वृत्ति विलीन हो जाएगी।

और अधिक पीड़ा चाहना पागलपन है और कोई भी जानबूझ कर पागल नहीं होता।

पीड़ा-देह, जो कि अहम् द्वारा फैलायी काली परछाई है, वास्तव में चेतना के प्रकाश से डरती है। उसे पाए जाने का डर है। उसका जीवन तुम्हारे उसके साथ अनजानी पहचान पर निर्भर है, साथ ही तुम्हारे अन्दर रह रही पीड़ा का सामना करने पर भी निर्भर है। परन्तु यदि तुम उसका सामना नहीं करते, उस पीड़ा में चेतना का प्रकाश नहीं लाते, तो तुम उसे बार-बार जीने के लिए मज़बूर होते हो।

पीड़ा-देह तुम्हें चाहे एक खतरनाक दानव जैसी लगे, जिसको तुम देख भी नहीं सकते, परन्तु मैं तुम्हें आश्वासन देता हूँ कि यह महत्त्वहीन दानव तुम्हारी उपस्थिति की शक्ति के समक्ष टिक नहीं सकता।

> **जब तुम द्रष्टा बन जाते हो** और अपनी पहचान को खत्म करना शुरू करते हो, तो कुछ समय के लिए पीड़ा-देह कार्य करती रहेगी और तुम्हें उसके साथ फिर से पहचान जमाने की कोशिश भी करेगी। यद्यपि तुम उसके साथ पहचान रख कर उसे शक्तिपूरित नहीं कर रहे हो, उसमें एक वेग है, वैसे ही जैसे चरखा घूमाना बन्द करने के बाद वह अपने आप थोड़ी देर तक घूमता रहता है। इस समय पर, वह शरीर के विभिन्न अंगों में पीड़ा पैदा करे परन्तु वे लम्बे समय तक नहीं टिकेंगे।
>
> वर्तमान में रहो, सजग रहो। अपनी अन्तर-आकाश स्थिति के सतर्क प्रहरी बनो। तुम्हें वर्तमान में इतना तो रहना है कि पीड़ा-देह को प्रत्यक्ष देख सको और उसकी शक्ति को महसूस कर सको। फिर वह तुम्हारी सोच को नियन्त्रित नहीं कर पाएगी।

जिस क्षण तुम्हारी सोच पीड़ा-देह के शक्तिक्षेत्र से सामंजस्य स्थापित करती है, तुम उससे जुड़ जाते हो और उसका अपने विचारों से पोषण करते हो। उदाहरण के लिए, यदि क्रोध पीड़ा-देह का मुख्य शक्ति स्पन्दन है और तुम क्रोध से भरे विचार सोचते हो, इस पर ध्यान देते हो कि दूसरे ने तुम्हारे साथ क्या किया या तुम उसके साथ क्या करोगे, तो तुमने जागरूकता खो दी है और पीड़ा-देह 'तुम' बन गयी है। जहाँ क्रोध है, उसके नीचे पीड़ा अवश्य है।

या जब तुम खराब मूड में चले जाते हो और मन की नकारात्मक वृत्तियाँ शुरू हो जाती हैं और तुम सोचने लगते हो कि जीवन कितना भयावह है, तब तुम्हारी सोच पीड़ा-देह से सरोकार करने लगी है और तुम पीड़ा-देह के हमले से अनजान हो और दुर्बल भी हो।

'अनजान' शब्द का प्रयोग मैं यहाँ मानसिक या भावनात्मक वृत्तियों से जुड़ने के अर्थ से कर रहा हूँ। इसका अर्थ है द्रष्टा का पूर्ण अभाव।

पीड़ा को चेतना में परिवर्तित करना

निरन्तर सचेत ध्यान पीड़ा-देह और तुम्हारे विचारों की प्रक्रिया के बीच की कड़ी को तोड़ देता है और परिवर्तन की प्रक्रिया को आरम्भ करता है। मानों पीड़ा तुम्हारी चेतना की अग्नि में ईंधन का काम करती है और वह ज़्यादा अधिक तेजी से जल उठती है।

यह कीमियागीरी की प्राचीन कला का गूढ़ अर्थ है: साधारण धातु को सोने में बदलना, पीड़ा को चेतना में परिवर्तित करना। अन्तर का अलगाव ठीक हो जाता है और तुम फिर भी पूर्ण हो जाते हो। तुम्हारी फिर जिम्मेदारी बनती है कि तुम और पीड़ा उत्पन्न न करो।

> **अपने अन्तर में ध्यान को केन्द्रित करो।** पहचानो कि वह पीड़ा-देह है। यह स्वीकार करो कि वह है। उसके बारे में सोचो नहीं — उस भावना को सोच में न बदलने दो। न समीक्षा करो, न आँको। उसमें से अपने लिए एक पहचान न बना लो। वर्तमान में रहो और जो तुम्हारे अन्दर में घट रहा है उसके द्रष्टा बने रहो।
>
> न केवल भावनात्मक पीड़ा के प्रति जागरूक हो वरन् शान्त द्रष्टा, 'जो देख रहा है' उसके प्रति भी सचेत हो। यह वर्तमान की शक्ति है, तुम्हारी सचेत उपस्थिति की शक्ति है। फिर देखो क्या होता है।

पीड़ा-देह से अहम् की पहचान

जिस प्रक्रिया का मैंने अभी वर्णन किया है वह शक्तिशाली, पर सरल है। उसे एक बच्चे को भी सीखा सकते हैं और आशा है कि एक दिन बच्चे अपने स्कूल के पहले दिन उसे सीखेंगे। एक बार जब तुमने अन्तर में जो घट रहा है उसे एक द्रष्टा के रूप में उपस्थित होकर देखने के मूल सिद्धान्त को समझ लिया है — और तुम अनुभव द्वारा 'समझ' पाते हो — तो तुम्हारे हाथों में एक बहुत ही शक्तिशाली रूपान्तरणकारी साधन है।

इस बात को नज़रअन्दाज़ नहीं कर सकते कि तुम्हें अपनी पीड़ा से पहचान तोड़ने में घोर आन्तरिक प्रतिरोध का सामना करना पड़े। यह तब ज़रूर होगा अगर तुमने लगभग अपना सारा जीवन भावनात्मक पीड़ा-देह से जुड़कर बिताया है और तुम्हारे होने का पूरा या थोड़ा कारण यही है। इसका यह अर्थ है कि तुमने अपनी पीड़ा-देह से एक नाखुश व्यक्ति तैयार किया है और यह तुम मानते भी हो कि यह मन-निर्मित कल्पना तुम्हारा असली रूप है। ऐसी परिस्थिति में, अपनी पहचान खोने का अनजाना भय किसी भी प्रकार की पहचान तोड़ने के सामने बड़ा प्रतिरोध खड़ा करेगा। दूसरे शब्दों में, अज्ञात में छलाँग लगाने और जाने-पहचाने नाखुश आत्मा को खोने के भय से, पीड़ा सहन करना, पीड़ा-देह में रहना ज़्यादा अच्छा है।

> **अपने अन्दर के प्रतिरोध का निरीक्षण करो।** पीड़ा से अपने लगाव का

निरीक्षण करो। बहुत सतर्क रहो। नाखुश रहने से जो एक विशिष्ट सुख तुम्हें मिलना है उसे देखो। उसके बारे में बात करने या सोचने की अपनी बाध्यता का निरीक्षण करो। यदि तुम उसे चेतन कर दो तो प्रतिरोध समाप्त हो जाएगा।

फिर तुम अपना ध्यान पीड़ा-देह में ले जा सकते हो, साक्षी की तरह उपस्थित रह सकते हो और इस तरह रूपान्तरण की प्रक्रिया की शुरुआत कर सकते हो।

केवल तुम कर सकते हो। कोई और तुम्हारे लिए नहीं कर सकता है। परन्तु यदि तुम सौभाग्यशाली हो कि ऐसे किसी को जानते हो जो पूर्णतः जागरूक व चेतन है, यदि तुम उनके साथ रह सको और उनकी उपस्थिति में टिक सको तो वह मददगार होगा और चीज़ों को तेज गति में कर देगा। इस तरीके से, तुम्हारा स्वयं का प्रकाश जल्दी से प्रबल हो जाएगा।

यदि अभी जलना शुरू हुई लकड़ी के लट्ठे को एक ज़ोर से जलती लकड़ी के बगल में रख दिया जाए, तो यदि थोड़े समय उसे हटा भी दिया जाए तो भी वह पहला लट्ठा ज़ोर से जलता रहेगा। आखिरकार, अग्नि तो एक ही है। ऐसी अग्नि बनना एक आध्यात्मिक शिक्षक का कार्य है। कुछ चिकित्सक भी शायद यह कार्य कर सकने में सक्षम हो सकते हैं, परन्तु यह जरूरी है कि वे मन के स्तर के परे जा चुके हों और तुम्हारे साथ कार्य करते हुए उनमें तीव्र चेतन उपस्थिति का निर्माण व उसको पोषित करने की क्षमता हो।

पहली बात जो याद रखने की है वह है: जब तक तुम पीड़ा से अपनी पहचान बनाओगे, तुम उससे मुक्त नहीं हो सकते। जब तक तुम्हारे आत्मभाव का तुम्हारी भावनात्मक पीड़ा में निवेश है, तब तक तुम उस पीड़ा को दूर करने के हर प्रयत्न का या तो? प्रतिरोध करोगे या फिर उसे असफल कर देते हो।

क्यों? सीधी-सी बात है, क्योंकि तुम अपने आपको बनाये रखना चाहते हो, और पीड़ा तुम्हारा अभिन्न अंग बन गयी है। यह एक अचेतन प्रक्रिया है और उससे ऊपर उठने का एक ही तरीका है, उसे चेतन बना दो।

तुम्हारी उपस्थिति की शक्ति

अचानक यह जानना कि तुम अपनी पीड़ा से जुड़े हो या थे, काफ़ी आघात देनेवाला बोध हो सकता है। जिस क्षण तुम्हें अहसास होता है, उस क्षण लगाव टूट जाता है।

पीड़ा-देह शक्ति क्षेत्र है, एक सत्ता की तरह, जो तुम्हारे अन्तर-आकाश में अस्थाई रूप में फँस गया है। यह जीवन शक्ति है जो फँस गयी है, शक्ति जो प्रवाहित नहीं हो रही

है।

पीड़ा-देह इसलिए है क्योंकि अतीत में कुछ घटनाएँ घटी हैं। वह अतीत तुम में जीवित है और यदि उससे पहचान बनाते हो तो तुम अतीत से पहचान बना रहे हो। शिकार बनने की पहचान यह धारणा है कि अतीत वर्तमान से ज़्यादा शक्तिशाली है, जो कि सत्य के बिल्कुल विपरीत है। यह धारणा है कि दूसरे लोग और उन्होंने जो तुम्हारे साथ किया, आज जो तुम हो, उसके जिम्मेदार हैं। वे तुम्हारे भावनात्मक पीड़ा और तुम्हारा अपना सच्चा स्वरूप न होने के जिम्मेदार हैं।

सत्य तो यह है कि जो भी शक्ति है, वह इसी क्षण में निहित है: वह तुम्हारी उपस्थिति की शक्ति है। एक बार जब तुम जान जाते हो, तुम्हें यह भी अहसास होता है कि तुम अपनी अन्तर-स्थिति के लिए जिम्मेदार हो — कोई और नहीं — और अतीत वर्तमान की शक्ति के सामने नहीं टिक सकता।

अचेतना उसका निर्माण करती है; चेतना उसे अपने रूप में परिवर्तित कर देती है। इस ब्रह्माण्डीय सिद्धान्त का सन्त पॉल ने सुन्दर वर्णन किया है, 'सबकुछ प्रकाश के होने से दृश्यमान है, और जो कुछ भी प्रकाश के सामने आता है, वह प्रकाश बन जाता है।'

जिस प्रकार तुम अन्धकार से लड़ नहीं सकते, तुम पीड़ा-देह से नहीं लड़ सकते। अगर ऐसा करने की कोशिश की तो अन्तर-द्वन्द्व पैदा होगा और फिर अधिक पीड़ा। देखना पर्याप्त है। देखने का मतलब है इस क्षण में जो है उसे उसके एक भाग के रूप में स्वीकार करना।

अध्याय सात

आसक्त से प्रकाशित सम्बन्ध की ओर

प्रेम-नफ़रत सम्बन्ध

जब तक तुम समस्त सम्बन्धों में, खासतौर पर घनिष्ठ सम्बन्धों में उपस्थिति की चेतन अवस्था को नहीं पा लेते, तब तक उनमें कमी रहेगी और अन्त में वे निष्काम हो जाएँगी। कुछ समय के लिए वे पूर्ण लग सकती हैं, जैसे कि जब तुम 'प्रेम में' होते हो तो वह दिखाई देने वाली पूर्णता बहस, द्वन्द्व, असंतुष्टि द्वारा नष्ट हो जाती है। यहाँ तक कि भावनात्मक व शारीरिक हिंसा की वारदातें भी बढ़ जाती हैं।

ऐसा लगता है कि अधिकांश प्रेम-सम्बन्ध बहुत जल्दी ही प्रेम-नफ़रत सम्बन्धों में बदल जाते हैं। प्रेम फिर पलक झपकते ही अशिष्ट हमले, द्वेष-भाव, या पूरी तरह से स्नेह के खत्म होने में बदल जाता है। यह सब सामान्य-सी बात मानी जाती है।

यदि तुम अपने सम्बन्धों में 'प्रेम' और प्रेम के विपरीत गुण — हमला, भावनात्मक हिंसा इत्यादि — दोनों का अनुभव करते हो, तो इसका मतलब है कि तुम अहम् के लगाव और आसक्त चिपकने को प्रेम समझ रहे हो। तुम एक क्षण अपने साथी को प्रेम और दूसरे ही क्षण उस पर हमला नहीं कर सकते। यदि तुम्हारे 'प्रेम' का विपरीत गुण है, तो वह प्रेम नहीं है बल्कि अहम् के अधिक पूर्ण व गहरे आत्मभाव के अनुभव के ज़रूरत है, ऐसी ज़रूरत जो वह व्यक्ति अस्थाई रूप से पूरा करता है। वह अहम् के लिए मोक्ष का प्रतिरूप है और थोड़े समय के लिए वह मोक्ष जैसा लगता भी है।

पर एक समय आता है जब तुम्हारा साथी तुम्हारी अपेक्षाओं पर खरा नहीं उतरता या फिर अहम् की ज़रूरतों को पूरा नहीं करता। ऐसा होने पर भय, पीड़ा और कभी वो भावनाएँ जो कि अहम् चेतना का अभिन्न अंग हैं, पर 'प्रेम सम्बन्ध' से ढँकी हुई थीं, फिर से प्रकट होने लगती हैं।

हर व्यसन की तरह, जब तुम नशीले पदार्थ पर हो तो अच्छा लगता है, परन्तु ऐसा समय ज़रूर आता है जब वह पदार्थ तुम पर कोई असर नहीं करता।

जब वे दुखदायी भावनाएँ उभरती हैं, तो तुम पहले से भी अधिक तीव्रता से उन्हें महसूस करते हो और जो ज़्यादा दुःख देता है, वह यह है कि तुम अपने साथी को उन

भावनाओं का कारण मानते हो। इसका मतलब है कि तुम उन्हें बाहर प्रक्षेपित करते हो और दूसरे पर खूँखार हमला करते हो। यह हिंसा तुम्हारी पीड़ा का ही भाग है।

यह हमला तुम्हारे साथी की पीड़ा को भी जगा सकता है और वह बचाव में तुम पर हमला कर सकता है। इस स्थिति में, अहम् अभी भी अचेतन रूप से यह अपेक्षा करता है कि उसका हमला या फिर उसकी होशियारी उसके साथी को अपना व्यवहार बदलने के लिए पर्याप्त सजा होगी, जिससे कि वह अपनी पीड़ा छुपाने के लिए फिर से उसका इस्तेमाल कर सके।

अपनी पीड़ा का सामना करने और उसे सहन करने की अचेतन अस्वीकृति से ही हर आसक्ति का उदय होता है। हर व्यसन पीड़ा से शुरू हो कर पीड़ा से खत्म होता है। चाहे तुम्हें किसी भी चीज़ की आसक्ति हो — शराब, भोजन, वैध-अवैध नशीले पदार्थ, या किसी व्यक्ति — तुम किसी चीज़ का या किसी व्यक्ति का अपनी पीड़ा छुपाने के लिए उपयोग कर रहे हो।

इसीलिए, आरम्भिक सुख-भ्रान्ति के गुज़र जाने पर, घनिष्ठ सम्बन्धों में बहुत अप्रसन्नता और पीड़ा होती है। वे अप्रसन्नता व पीड़ा को बस बाहर लाते हैं। हर व्यसन ऐसा ही करता है। हर व्यसन ऐसे बिन्दु पर पहुँच जाता है जहाँ पर वह तुम्हारे लिए काम करना बन्द कर देता है और तब तुम्हें पहले से भी अधिक पीड़ा का अनुभव होता है।

यह एक कारण है जिसकी वज़ह से अधिकतर लोग वर्तमान क्षण से भागने और भविष्य में मुक्ति पाने के लिए कोशिश करते रहते हैं। यदि वे अपना ध्यान वर्तमान पर केन्द्रित करें तो पहली चीज़ जिससे उनका सामना होता है वह है उनकी पीड़ा, और इसी का उनको डर है। काश! उन्हें पता होता कि उस शक्ति की उपस्थिति को वर्तमान में पाना कितना आसान है जो अतीत और उसकी पीड़ा को विलीन कर सकती है, वह वास्तविकताजो भ्रम को विलीन कर देती है। काश! उन्हें पता होता कि वे अपनी वास्तविकता के कितने निकट हैं, अपने ईश्वर के कितने समीप हैं।

रिश्तों से बचना पीड़ा से बचने का एक प्रयत्न है और यह किसी चीज़ का उत्तर भी नहीं है। पीड़ा तो बनी ही रहती है। तीन सालों में, तीन असफल रिश्ते तुम्हें जाग्रत होने के लिए ज़्यादा बाध्य कर सकते हैं, ना कि मरुस्थल या बन्द कमरे में तीन साल। परन्तु यदि तुम अपने अकेलेपन में तीव्र उपस्थिति ले आओ, तो वह भी तुम्हारे लिए काम करेगी।

आसक्त से प्रकाशित रिश्तों की ओर

चाहे तुम अकेले रहते हो या फिर साथी के साथ, मुख्य बात यही रहती है: उपस्थित रहना और वर्तमान में अपने ध्यान को गहराई में ले जाकर अपनी उपस्थिति को और तीव्र करना।

प्रेम को फलने-फूलने के लिए, तुम्हारी उपस्थिति के प्रकाश को इतना

सशक्त होना है जिससे कि तुम्हारा मन या पीड़ा-देह तुम पर हावी न हो और उनकी पहचान को भी गलत समझो। स्वयं को मन के पीछे की आत्मा के रूप में, मानसिक शोर के पीछे की स्तब्धता के रूप में, पीड़ा के पीछे, प्रेम व उल्लास के रूप में, स्वयं को समझना, मुक्ति, मोक्ष, साक्षात्कार है।

पीड़ा-देह से अपनी पहचान को तोड़ने का मतलब है पीड़ा में उपस्थिति को लाना और इस तरह उसे रूपान्तरित करना। सोचने से पहचान न रखने का मतलब है अपने विचारों और व्यवहार, खासतौर पर मन की बार-बार घटनेवाली वृत्तियों और अहम् की विभिन्न भूमिकाओं का मौन द्रष्टा बनना।

यदि तुम उसमें 'स्वार्थ' का निवेश करना बन्द कर दो, तो मन की बाध्यकारी प्रवृत्ति, जो कि समीक्षा करने की विवशता है, और जो है उसका प्रतिरोध करना जिससे की द्वन्द्व, नाटक और नयी पीड़ा का उदय हो, ऐसी प्रवृत्ति खो जाती है। वास्तव में, जिस क्षण, जो है उसे स्वीकार करके, समीक्षा रूक जाती है, तुम मन से मुक्त हो जाते हो। तुम प्रेम, उल्लास व शान्ति के लिए स्थान बना लेते हो।

सबसे पहले तुम स्वयं को आँकना छोड़ देते हो; फिर अपने साथी को आँकना बन्द कर देते हो। किसी भी रिश्ते में बदलाव का उत्प्रेरक है अपने साथी को वह जैसा है, वैसा स्वीकार करना। इस आशा के बिना कि वह बदलेगा या आँके बिना उसे स्वीकार करना।

यह तुरन्त ही तुम्हें अहम् के परे ले जाता है। और तब मन के सारे खेल और व्यसनी लगाव खत्म हो जाते हैं। ना कोई शिकार होता है और ना ही अपराधी, ना ही आरोप लगानेवाला और ना ही आरोपी।

यह अन्त है समस्त सह-निर्भरता का, किसी और की अचेतन वृत्तियों की ओर खिंचे जाने का और उन्हें कायम रखने का। या तो तुम अलग हो जाओगे — प्रेम में — या फिर वर्तमान में, अपनी आत्मा में और गहराई से एक हो जाओगे। क्या यह इतना आसान है? हाँ, यह इतना आसान ही है।

प्रेम आत्मा की स्थिति है। तुम्हारा प्रेम बाहर नहीं है, वह तुम्हारे अन्तर में गहरे है। तुम उसे कभी खो नहीं सकते, और ना ही वह तुम्हें छोड़ सकता है। वह बाहरी रूप या किसी और पर निर्भर नहीं है।

अपनी उपस्थिति की स्तब्धता में, तुम अपनी निराकार व समयातीत वास्तविकता को अप्रकट जीवन, जो कि तुम्हारे भौतिक रूप को चलायमान रखता है, के रूप में महसूस करते हो। तब फिर तुम वही जीवन हर मानव व हर प्राणी के अन्दर भी महसूस करते हो। तुम रूप और विलगता के आवरण के परे देखते हो। यह एकता का अहसास है। यह प्रेम है।

यद्यपि तुम्हें प्रेम की क्षणिक झलक मिल सकती है, प्रेम तब तक फलता-फूलता नहीं जब तक तुम मन की पहचान से स्थाई रूप से मुक्त नहीं हो जाते और तुम्हारी उपस्थिति इतनी सशक्त नहीं हो जाती कि वह पीड़ा-देह को विलीन कर सके — या फिर तुम कम से कम एक द्रष्टा के रूप में उपस्थित रह सको। पीड़ा-देह फिर तुम पर हावी नहीं हो सकती और अतः विनाशक प्रेम नहीं बन सकती।

आध्यात्मिक अभ्यास के रूप में सम्बन्ध

मानव अपने मन से पहचान ज़्यादा करने लगे हैं, और अधिकतर सम्बन्ध आत्मा में स्थित नहीं हैं और इसीलिए पीड़ा का स्रोत बन जाते हैं तथा मुश्किलों व द्वन्द्व से भरे होते हैं।

यदि सम्बन्ध अहंकारी मन की वृत्तियों को शक्तिपूरित व बढ़ाते हैं और पीड़ा-देह को जगा देते हैं, जैसा कि वह इस समय पर करते हैं, तो क्यों न इस सत्य से भागने के बजाए उसको अपना लो? उसका सहयोग करो, बजाए इसके कि रिश्तों से दूर भागो या अपनी दिक्कतों के उत्तर के रूप में या परिपूर्ण अनुभव करने के लिए एक आदर्श साथी के वेताल को ढूँढ़ते रहो?

तथ्यों को अपनाने व स्वीकारने से उनसे कुछ हद तक मुक्ति मिल जाती है।

उदाहरण के लिए, जब तुम यह जानते हो कि असामंजस्य की स्थिति है और तुम उस 'जानने' को बनाये रखते हो, तो उस जानने से एक नया आयाम खुलता है और असामंजस्य की स्थिति में परिवर्तन आ ही जाता है।

> **जब तुम्हें पता होता है कि तुम्हें शान्ति नहीं है,** तो तुम्हारा ज्ञान, जानना, एक ऐसी शान्त स्थिति का निर्माण करता है जो कि तुम्हारी अशान्ति को प्रेममय व मृदुल आलिंगन में ले लेती है और तुम्हारी अशान्ति को शान्ति में परिवर्तित कर देती है।
>
> जहाँ तक अन्तर-रूपान्तरण की बात है, तुम उसके बारे में कुछ नहीं कर सकते। तुम स्वयं का रूपान्तरण नहीं कर सकते, और निश्चित रूप से अपने साथी या किसी और का रूपान्तरण तो बिल्कुल नहीं कर सकते। जो तुम कर सकते हो, वह है रूपान्तरण होने के लिए कृपा और प्रेम को प्रवेश करने के लिए जगह बनाना।

तो जब कभी तुम्हारे सम्बन्ध ठीक ना हों या उनमें कुछ हलचल सी हो, जब वे तुम्हारे साथी या तुम में 'पागलपन' पैदा करें, तो खुश होना। जो अचेतन था वह उजागर हो रहा है। यह मोक्ष के लिए एक सुअवसर है।

> **हर क्षण, उस क्षण की जागरूकता को बनाए रखना,** खासतौर पर अपनी अन्तर-स्थिति की जागरूकता को। यदि क्रोध है, तो जानो कि

> क्रोध है। यदि जलन, प्रतिरक्षा की भावना, बहस करने की इच्छा, सही होने की ज़रूरत, अन्तर-बाल की प्रेम व ध्यान पाने की माँग या किसी भी प्रकार की भावनात्मक पीड़ा है — चाहे कुछ भी क्यों न हो, उस क्षण की वास्तविकता को जानो और जागरूकता को बनाए रखो।

सम्बन्ध तब तुम्हारी साधना, एक आध्यात्मिक अभ्यास बन जाएँगे। यदि तुम अपने साथी में अजागरूक व्यवहार देखो, उसे अपनी जागरूकता के प्रेममय आलिंगन में ले लेना ताकि तुम प्रतिक्रिया व्यक्त न करो।

अजागरूकता और जागरूकता कभी साथ-साथ नहीं रह सकती — चाहे वह जागरूकता दूसरे व्यक्ति में हो, ना कि उसमें जो अजागरूक रूप से व्यवहार कर रहा हो। शत्रुता और आक्रमण की शक्ति, प्रेम की उपस्थिति को सहन नहीं कर पाती। यदि तुम अपने साथी की अजागरूकता का ज़वाब देते हो तो तुम स्वयं अजागरूक हो जाते हो। परन्तु अगर तब तुम अपनी प्रतिक्रिया के प्रति जागरूक हो जाते हो, तो कुछ हानि नहीं होती।

आज सम्बन्ध जितनी दिक्कतों से भरे और संघर्षपूर्ण हैं, पहले कभी न थे। जैसा कि तुमने देखा होगा, वे तुम्हें खुश व परिपूर्ण करने के लिए नहीं हैं। यदि तुम मोक्ष के लक्ष्य को सम्बन्धों द्वारा पाने की कोशिश करते रहोगे, तो तुम्हारा बार-बार भ्रम टूटेगा। परन्तु यदि तुम यह मान लो कि सम्बन्ध तुम्हें खुश रखने के बजाए जागरूक करने के लिए हैं, तब सम्बन्ध तुम्हें मुक्ति प्रदान करेंगे, और तुम उस उच्चतम् चेतना से सामंजस्यता में आ जाओगे जो इस संसार में जन्म लेना चाहती है।

वे लोग जो पुरानी वृत्तियों को पकड़े रखना चाहते हैं, अधिकाधिक पीड़ा, हिंसा, अस्पष्टता व पागलपन रहेगा।

तुम्हारे जीवन को आध्यात्मिक अभ्यास बनाने के लिए तुम्हें कितने लोग चाहिए होते हैं? यदि तुम्हारा साथी साथ नहीं देता, तो चिन्ता मत करो। विवेकशीलता — चेतना-केवल तुम्हारे द्वारा ही इस संसार में आ सकती है। तुम्हारे आत्मज्ञानी होने के पहले, तुम्हें यह इन्तज़ार करने की ज़रूरत नहीं है कि संसार समझदार बने, या कोई और जागरूक हो। तुम शायद जीवन पर्यन्त इन्तज़ार करते रहोगे।

एक-दूसरे पर अचेतन होने का आरोप मत लगाओ। जिस क्षण तुम बहस करना शुरू करते हो, तुम मानसिक स्थिति से पहचान बना लेते हो और तब न केवल उस स्थिति का बचाव कर रहे हो बल्कि अपने होने के भाव का भी। अहम् सर्वेसर्वा बन जाता है। तुम अचेतन हो गये हो, अपने साथ के व्यवहार के कुछ विशिष्ट पहलुओं को उजागर करना कुछ एक परिस्थितियों में उचित हो सकता है। यदि तुम सचेत हो, वर्तमान में हो, तो तुम बिना अहम् के आये, बिना आरोप लगाये या बिना उसे गलत साबित किए कर सकते हो।

जब तुम्हारा साथी अजागरूक होकर व्यवहार करता है, तो अपने आँकने की क्षमता को त्याग दो। आँकना, या तो दूसरे व्यक्ति के अचेतन व्यवहार को उनका सच्चा स्वरूप

समझने का भ्रम है या फिर अपने अचेतन व्यवहार को दूसरे पर प्रक्षेपित करके यह समझना कि वे वह व्यवहार हैं।

आँकने को छोड़ने का मतलब यह नहीं है कि तुम विक्रिया और अचेतन को जब देखो तो उसे पहचानों ही नहीं। उसका अर्थ है 'जागरूकता का होना', ना कि 'प्रतिक्रिया का होना' और निर्णायक का भी। ऐसा होने पर या तो तुम प्रतिक्रिया से पूरी तरह से मुक्त हो जाओगे या फिर तुम प्रतिक्रिया करोगे और जागरूकता रहेगी, वह स्थिति जिसमें प्रतिक्रिया को देखा जा सकता है और उसे होने भी दिया जा सकता है। अन्धकार से लड़ने के बजाए तुम प्रकाश को लाओ। भ्रम पर प्रतिक्रिया करने के बजाए, तुम भ्रम को देखोगे और फिर भी साथ ही साथ उसके पार भी देख लोगे।

जागरूकता बन जाने से, एक स्पष्ट प्रेममय उपस्थिति का निर्माण होता है, जो समस्त चीज़ों व लोगों को जैसे वे हैं वैसे ही बने रहने देती है। रूपान्तरण के लिए इससे बड़ा कोई उत्प्रेरक नहीं हो सकता। यदि तुम इसका अभ्यास करो, तो तुम्हारा साथी तुम्हारे साथ रहकर अचेत नहीं रह सकता।

यदि तुम दोनों इस बात पर सहमत हो जाओ कि तुम्हारा सम्बन्ध तुम्हारा आध्यात्मिक अभ्यास होगा, तो और भी अच्छी बात है। फिर तुम अपने विचारों और भावनाओं को, जैसे वे उभरते हैं, या प्रतिक्रियाएँ जैसे वे आती हैं, तुरन्त ही एक-दूसरे से बता सकते हो, जिससे कि तुम उस समय-अवधि का निर्माण नहीं करोगे जिसमें अनकहे या अस्वीकार की भावनाएँ व शिकायतें पनपने और बढ़ने लगती हैं।

> **बिना आरोप लगाए अपने एहसासों को व्यक्त करना सीखो।** अपने साथी को खुले व अपना बचाव न करने के तरीके से सुनना सीखो।
>
> अपने साथी को व्यक्त करने के लिए अवसर दो। उपस्थित रहो। आरोप लगाना, बचाव करना या हमला करना — ये सभी प्रवृत्तियाँ जो तुम्हारे अहम् को सशक्त व उसकी सुरक्षा करने या उसकी ज़रूरतों को पूरा करने के लिए बनायी गयी हैं, बेकार हो जाएँगी। दूसरों को अवसर देना — और स्वयं को भी — अत्यावश्यक है। बिना उसके प्रेम पनप नहीं सकता।

जब तुमने उन दो कारकों को, जो सम्बन्धों को हानि पहुँचाते हैं, हटा देते हो — जब पीड़ा-देह परिवर्तित हो जाती है और तुम अपने मन व उसकी मानसिक स्थिति से पहचान नहीं रखते हो — और यदि तुम्हारे साथी ने भी ऐसा ही किया है, तुम रिश्तों के फलने-फूलने के आनन्द को महसूस करोगे। पीड़ा या अजागरूकता को प्रतिबिम्बित करने के बजाए, तुम उस प्रेम को प्रतिबिम्बित करोगे जो तुम अपने अन्दर में महसूस करते हो, वह प्रेम जो हर एक से तुम्हारे एक होने के एहसास से आता है।

यह वह प्रेम है जिसका कोई विपक्ष नहीं है।

यदि तुम्हारा साथी अभी भी मन से तथा पीड़ा-देह से पहचान रखता है और तुम

उससे स्वतन्त्र हो चुके हो, तो यह एक बड़ी चुनौती पैदा कर देगा — तुम्हारे लिए नहीं, तुम्हारे साथी के लिए। एक जाग्रत व्यक्ति के साथ रहना आसान नहीं है या फिर ऐसा कहें कि अहम् उससे डर जाता है।

याद रखो कि अहम् को परेशानियाँ, झगड़े, 'दुश्मन' चाहिए जिससे कि वह उस विलगता के भाव को सशक्त बना सके जिस पर उसकी पहचान निर्भर है। अचेतन साथी का मन कुण्ठित हो जाएगा क्योंकि उसकी नियत स्थितियों का प्रतिरोध नहीं किया जा रहा है, इसका मतलब है कि वे कमज़ोर व अस्थिर हो जाएँगी और शायद यह 'खतरा' भी हो कि वे पूरी तरह से धरासायी हो जाए और नतीज़तन आत्मा की हानि हो।

पीड़ा-देह ज़वाब चाहती है और वह उसे मिल नहीं रहा है। बहस, नाटक या झगड़े की ज़रूरतें पूरी नहीं हो रही है।

अपने आप से सम्बन्ध को छोड़ दो

जाग्रत या नहीं, तुम या तो पुरुष हो या स्त्री, तो अपने रूप से पहचान के स्तर पर तुम अपूर्ण हो। तुम पूर्णता का आधा हिस्सा हो। चाहे तुम कितने जाग्रत हो, यह अपूर्णता पुरुष-स्त्री आकर्षण के रूप में, विपरीत लैंगिक शक्ति के खिंचाव के रूप में, महसूस की जाती है। परन्तु अन्तर-जुड़ाव की स्थिति में, तुम इस खिंचाव को जीवन की सतह पर महसूस करते हो।

इसका मतलब यह बिल्कुल नहीं है कि तुम दूसरे लोगों से या अपने साथी से प्रगाढ़ सम्बन्ध नहीं रखते। वास्तव में, जब तुम आत्मा के प्रति जाग्रत होते हो तब ही प्रगाढ़ सम्बन्ध रख सकते हो। आत्मा से आने पर तुम रूप के पर्दे के परे देख पाते हो। आत्मा में, स्त्री-पुरुष एक है। तुम्हारे रूप की कुछ ज़रूरतें हो सकती हैं, परन्तु आत्मा की कुछ नहीं होती। वह पहले से ही पूर्ण व समग्र है। यदि वे ज़रूरतें पूरी होती हैं, तो सुन्दर है; परन्तु वे पूरी होती हैं या नहीं, इससे तुम्हारी गहन अन्तर-स्थिति को कुछ फ़र्क नहीं पड़ता है।

अतः एक जाग्रत व्यक्ति के लिए यह पूर्णतः सम्भव है कि यदि उसका स्त्री-पुरुष आकर्षण पूरा नहीं होता है, तो उसे अपने अस्तित्व के बाहरी स्तर पर अपूर्णता या कमी का अनुभव हो, फिर भी उसी समय पर वह पूर्णता, संतुष्टि व अन्तर में शान्ति का अनुभव भी कर सकता है।

यदि जब तुम अकेले हो तो अपने अन्तर में सहज नहीं हो सकते, तो तुम अपनी असहजता को छिपाने के लिए सम्बन्धों को खोजोगे। इस बात के प्रति तुम आश्वस्त हो सकते हो कि वह असहजता किसी दूसरे रूप में तुम्हारे सम्बन्ध में प्रकट होगी और तुम अपने साथी को शायद उसके लिए जिम्मेदार ठहराओगे।

तुम्हें केवल इस क्षण को पूर्णतः स्वीकार करने की आवश्यकता है।
तुम इस वर्तमान क्षण में सहज होगे और अपने आप से भी सहज होगे।

परन्तु क्या तुम्हें स्वयं से सम्बन्ध रखना ज़रूरी है? तुम बस स्वयं क्यों नहीं हो सकते? जब तुम्हारा स्वयं से सम्बन्ध होता है तो तुम अपने आपको दो में बाँट देते हो: 'मैं' और 'मेरा स्वरूप' विषय तथा वस्तु। मन-रचित यह द्वैत तुम्हारे जीवन की समस्त अनावश्यक परेशानियों, जटिलताओं व झगड़ों का मूल कारण है।

जाग्रत स्थिति में, तुम अपना सच्चा स्वरूप हो — 'तुम' 'तुम्हारा' दोनों एक हो जाते हैं। तुम स्वयं को आँकते नहीं, अपने बारे में खेद नहीं होता, खुद पर घमण्ड नहीं होता, तुम स्वयं से प्रेम नहीं करते, स्वयं से नफ़रत नहीं करते। आत्म-ध्यानमग्न शक्ति द्वारा उपजा विभाजन भर जाता है, उसका श्राप हट जाता है। कोई 'आत्म' नहीं है जिसकी तुम्हें सुरक्षा, बचाव या पोषण करने की ज़रूरत है।

जब तुम साक्षात्कारी, जाग्रत हो जाते हो तो एक सम्बन्ध जो बाकी नहीं बचता वह है: स्वयं से सम्बन्ध। एक बार जब तुम उसे त्याग देते हो तो तुम्हारे समस्त सम्बन्ध प्रेम-सम्बन्ध बन जाते हैं।

भाग तीन

स्वीकृति और समर्पण

जो है उसे जब तुम समर्पित होते हो
अतः पूर्ण रूप से उपस्थित हो जाते हो,
अतीत में कोई शक्ति नहीं रह जाती।
आत्मा का लोक, जो कि मन के कारण खो चुका होता है,
खुल जाता है।
एकाएक, एक गहन स्तब्धता उपजती है तुम्हारे अन्तर में,
एक अगाध शान्ति का भाव।
और उस प्रशान्ति के अन्दर एक महान उल्लास है।
और उस उल्लास के अन्दर प्रेम है।
और गहनतम् गर्भ में पवित्रता है,
अनन्त, आत्मा जिसका कोई नाम नहीं है।

अध्याय आठ

वर्तमान की स्वीकृति

नश्वरता और जीवन चक्र

जब तुम्हें चीजें मिलती है और बढ़ती भी हैं, तब सफलता का चक्र चल रहा होता है और जब वे बिखर जाती हैं, छिन्न-भिन्न हो जाती हैं और तुम्हें नयी चीजों के पनपने के लिए जगह बनाने की वजह से उन्हें छोड़ना पड़ता है या परिवर्तन लाने के लिए त्यागना पड़ता है तब असफलता का चक्र चल रहा होता है।

यदि तुम उस समय प्रतिरोध करो और उनसे चिपक जाओ तो इसका मतलब है कि तुम जीवन के प्रवाह के साथ बहने से इन्कार कर रहे हो और तुम्हें पीड़ा होती है। नयी उन्नति के लिए अवनति का होना ज़रूरी है। एक चक्र दूसरे के बिना अस्तित्व में नहीं हो सकता।

आध्यात्मिक समझ के लिए अधोमुखी चक्र परमावश्यक है। तुम किसी न किसी स्तर पर असफल हुए होगे या तुमने गहरे दु:ख या क्षति का अनुभव किया होगा और इसलिए आध्यात्मिक आयाम की ओर खिंचे चले आये हो। या फिर शायद तुम्हारी सफलता ही खाली और अर्थहीन बन गयी और इसलिए असफलता में परिवर्तित हो गयी।

हर सफलता में असफलता छिपी हुई है और हर असफलता में सफलता। इस संसार में, जिसका मतलब है रूप के स्तर पर, हर कोई कभी न कभी तो 'असफल' होता ही है और हर उपलब्धि अन्ततः छोटी बन जाती है। सारे रूप अस्थाई हैं।

तुम अब भी सक्रिय रह कर, नये रूप और परिस्थितियों को निर्मित करके उनका आनन्द उठा सकते हो, परन्तु अब तुम उसके साथ पहचान नहीं रखोगे। तुम्हें आत्मानुभव के लिए उनकी ज़रूरत नहीं है। वे तुम्हारा जीवन नहीं हैं — केवल तुम्हारी जीवन परिस्थिति हैं।

एक चक्र, कुछ घण्टों से लेकर कुछ सालों तक चल सकता है। एक बड़े चक्र में कई बड़े और छोटे चक्र होते हैं। अनेक बीमारियाँ पैदा होती हैं कम शक्ति के चक्रों से, जो कि सुधार के लिए, जूझने से, आवश्यक है। करने की बाध्यता और अपने आत्म-भाव व पहचान को बाहरी घटकों जैसे उपलब्धि से पाने की प्रवृत्ति एक अपरिहार्य भ्रम है जो कि

तब तक बना रहेगा जब तक तुम अपने मन से पहचान बनाए रखोगे।

तुम्हारे लिए यह मुश्किल या असम्भव हो जाता है कि तुम मन्द चक्रों को स्वीकार लो और उन्हें होने दो। अतः जीव की प्रज्ञा सम्भवतः एक आत्म-रक्षण उपाय के रूप में कब्जा कर लेगी और तुम्हें रोकने के लिए बीमारी पैदा कर देगा, जिससे कि जिस सुधार की ज़रूरत है वह हो सके।

जब तक तुम्हारा मन परिस्थिति को 'सही या अच्छा' समझता है, चाहे वह सम्बन्ध हो, सम्पत्ति हो, कोई सामाजिक भूमिका, स्थान या तुम्हारा भौतिक शरीर, मन अपने आपको उससे जोड़ लेता है और उससे पहचान रखता है। इससे तुम्हें खुशी मिलती है, तुम्हें अपने आपके बारे में अच्छा लगता है और शायद जो तुम हो या जो अपने बारे में सोचते हो उसका हिस्सा भी बन जाए।

परन्तु इस आयाम में जहाँ दीमक और जंग सब कुछ खा जाती है, कुछ भी नहीं बचता। या तो वह खत्म हो जाता है या फिर बदल जाता है, या फिर उसमें ध्रुवीय परिवर्तन की प्रक्रिया शुरू हो जाती है: वही परिस्थिति जो कल या पिछले साल तक अच्छी थी, एकाएक या धीरे-धीरे खराब हो गयी। वही परिस्थिति जो पहले तुम्हें खुश करती थी, अब नाखुश करती है। आज की समृद्धि कल का खोखला उपभोक्तावाद बन जाता है। सुखद विवाह और मधुर समय, दुःखद तलाक या दुःखद साथ रहने में बदल जाता है।

या फिर एक परिस्थिति गायब हो जाती है और इसलिए उसका अभाव तुम्हें दुखी करता है। जब वह परिस्थिति या दशा जिससे मन ने अपने आपको जोड़ रखा है और जिससे उसकी पहचान है, बदल जाती है या फिर गायब हो जाती है, तो मन उसको स्वीकार नहीं कर पाता। वह गायब होती दशा को पकड़े रहेगा और बदलाव का प्रतिरोध करेगा। मानो शरीर से किसी अंग को काट फेंका जा रहा है।

इसका अर्थ यह है कि तुम्हारी प्रसन्नता और अप्रसन्नता वास्तव में एक हैं। केवल समय का भ्रम उन्हें अलग रखता है।

> **जीवन का बिल्कुल भी विरोध न करना** कृपा, सहजता व हल्केपन की स्थिति में होना है। फिर यह स्थिति चीज़ों के किसी विशिष्ट रूप में, अच्छे या बुरे होने पर निर्भर नहीं करती।

यह विरोधाभासपूर्ण लगेगा, फिर भी जब रूप पर तुम्हारी आत्म-निर्भरता चली जाती है, तुम्हारे जीवन की सामान्य दशा, बाहरी रूप, बहुत हद तक सुधर जाते हैं। चीज़ें, लोग या परिस्थितियाँ जो तुम्हें लगता था तुम्हारी खुशी के लिए तुम्हें चाहिए, अब बिना किसी संघर्ष या प्रयत्न के तुम तक आने लगती हैं और तुम अन्ततः उनका आनन्द लेने व उन्हें स्वीकार करने के लिए स्वतन्त्र होते हो।

वे सारी चीज़ें तो अवश्य ही बीत जाएँगी, चक्र आयेंगे व जायेंगे, परन्तु निर्भरता के जाने पर खोने का डर नहीं रहता। जीवन सहजता से प्रवाहित होता है।

किसी दूसरे या अन्य स्रोत से मिली खुशी बहुत गहरी नहीं होती। यह आत्मा के आनन्द का, उस जीवन शान्ति का, जो तुम प्रतिरोध न करने की स्थिति में प्रवेश करने से महसूस करते हो, का फीका-सा प्रतिबिम्ब है। आत्मा तुम्हें मन के द्वन्द्वात्मक ध्रुवों के परे ले जाता है और रूप पर निर्भरता से तुम्हें मुक्त करता है। यदि तुम्हारे चारों ओर सबकुछ अस्त-व्यस्त और ध्वस्त हो जाए, तुम फिर भी गहन अन्तर-प्रशान्ति का अनुभव करोगे। तुम शायद खुश न हो, पर तुम शान्ति का अनुभव करोगे।

नकारात्मकता का उपयोग और त्याग

सभी अन्तर प्रतिरोधों का अनुभव एक या दूसरे रूप में नकारात्मकता के रूप में किया जाता है। सारी नकारात्मकताएँ प्रतिरोध हैं। इस विषय में, ये एक-दूसरे के पर्यायवाची हैं।

चिड़चिड़ाहट या अधीरता से लेकर प्रचण्ड क्रोध तक, अवसादी मन या उचाट नाराज़गी से लेकर आत्मघाती हताशा तक, सबकुछ नकारात्मकता ही है। कई बार प्रतिरोध भावनात्मक पीड़ा-देह को जगा देता है और ऐसी परिस्थिति में एक छोटी-सी घटना भी घनघोर नकारात्मकता जैसे क्रोध, अवसाद या गहरे विषाद को पैदा कर देती है।

अहम् का यह मानना है कि नकारात्मकता के द्वारा वह वास्तविकता को तोड़-मरोड़ सकता है और उसे जो चाहिए वह पा सकता है। उसका मानना है कि उसके द्वारा वह इच्छित दशा को आकर्षित कर सकता है या फिर अनिच्छित दशा को गायब।

यदि तुम — मन — यह न मानते कि अप्रसन्नता काम करती है, तो तुम उसकी रचना ही क्यों करते? सच्चाई यह है कि नकारात्मकता वास्तव में काम करती है। ऐच्छिक दशा को आकर्षित करने के बजाए वह उसे उभरने से रोकती है। अनैच्छिक दशा को हटाने के बजाए, वह उसे कायम रखती है। उसका केवल 'उपयोगी' काम है कि वह अहम् को सुदृढ़ बनाती है और इसीलिए अहम् उससे प्यार करता है।

एक बार जब तुम किसी नकारात्मकता से जुड़ जाते हो तो तुम उसे जाने नहीं देना चाहते और एक गहरे अवचेतन स्तर पर, तुम सकारात्मक बदलाव नहीं चाहते। वह अवसादी हतोत्साहित क्रोधी और हठी व्यक्ति के रूप में तुम्हारी पहचान को चुनौती-सा लगता है। तुम फिर अपने जीवन की सकारात्मकता को अनदेखा करोगे, नकारोगे और उसकी क्षति करोगे। यह आम बात है। यह पागलपन भी है।

किसी भी पेड़ या जानवर को देखो और उसे तुम्हें वर्तमान को समर्पण और जो है उसे स्वीकार करना सिखाने दो।

उसे सत् के बारे में सिखाने दो।

उसे निष्ठा, समग्रता के बारे में सिखाने दो — जिसका अर्थ है एक होना, सच्चा होना, वास्तविक होना।

उसे तुम्हें कैसे जीना है और कैसे मरना है यह सिखाने दो और यह भी कि कैसे जीने-मरने को परेशानी नहीं बनाना है।

बार-बार उभरनेवाले नकारात्मक संवेग में कई बार एक सन्देश छिपा होता है, वैसे ही जैसे बीमारी में होता है। परन्तु कोई भी बदलाव जो तुम लाते हो, चाहे वह किस तरह तुम काम करते हो; उसमें तुम्हारे सम्बन्धों में या तुम्हारे परिवेश में, वह सब केवल कृत्रिम होंगे तब तक जब तक यह सब तुम्हारी चेतना के स्तर में बदलाव से नहीं उपजते। और जहाँ तक उसकी बात है, उसका केवल एक ही अर्थ है: अधिक जागरूक रहना, वर्तमान में रहना। जब तुम्हारी जागरूकता एक निश्चित स्तर पर पहुँच जाती है, तब तुम्हें यह जानने के लिए कि जीवन-परिस्थिति में क्या चाहिए, नकारात्मकता की ज़रूरत नहीं पड़ती।

पर जब तक नकारात्मकता है उसका उपयोग करो। उसे एक सिग्नल की तरह इस्तेमाल करो जो तुम्हें याद दिलायेगा कि अधिक जागरूक होना है।

जब कभी तुम्हें अपने अन्दर में नकारात्मकता उभरती लगे, चाहे वह बाहरी कारणों की वजह से, या विचार या फिर ऐसे कुछ से जो तुम्हें पता भी नहीं है, उसे एक आवाज़ के रूप में देखो, जो तुम से कह रही है, 'सावधान। यहाँ और अभी। जागो। अपने मन से बाहर आओ। वर्तमान में रहो।'

ज़रा-सा चिड़चिड़ापन भी महत्त्वपूर्ण है और उसे स्वीकारने व उसे देखने की ज़रूरत है; वरना अनदेखी प्रतिक्रियाओं का एक संचय बढ़ जाएगा।

जब तुम्हें यह अहसास होगा कि तुम्हें अपने अन्दर यह शक्ति क्षेत्र नहीं चाहिए और वह तुम्हारे किसी भी काम का नहीं है तो उसे बस यूं ही छोड़ पाओगे। पर यह सुनिश्चित करना कि पूरी तरह छोड़ दो। यदि तुम उसे छोड़ नहीं सकते तो यह स्वीकार करो कि वह है और अपने ध्यान को भावना में ले जाओ।

नकारात्मक प्रतिक्रिया को छोड़ने के विकल्प के रूप में तुम उसे यह कल्पना करके गायब कर सकते हो कि तुम प्रतिक्रिया के बाहरी कारण के लिए पारदर्शी हो।

मैं सुझाव दूँगा कि पहले-पहल तुम इसे छोटी, यहाँ तक तुच्छ चीज़ों के लिए प्रयोग करो। मानो, तुम घर पर शान्त बैठे हो। अचानक सड़क के उस पार से कार अलार्म की तीखी आवाज़ आती है। चिड़चिड़ापन उभरता है। इस चिड़चिड़ेपन का क्या कारण है? कुछ भी नहीं। तुमने उसकी रचना क्यों की? तुमने नहीं की। मन ने की। यह अपने आप हुई, बिलकुल अचेतन रूप में।

मन ने क्यों रचना की? क्योंकि उसकी अचेतन धारणा है कि प्रतिरोध, जिसका तुम नकारात्मकता या अप्रसन्नता के रूप में अनुभव करते हो, वह अनैच्छिक दशा को गायब कर देगी। यह, सच में, एक भ्रम है जिसे प्रतिरोध का वह निर्माण करती है, इस उदाहरण

में चिड़चिड़ापन या क्रोध वह उस मूल कारण, जिसे वह गायब करनेवाली है, से ज़्यादा व्याकुल करनेवाला है।

यह सबकुछ एक आध्यात्मिक अभ्यास में रूपान्तरित हो सकता है।

> **स्वयं को पारदर्शी होता महसूस करो,** मानो भौतिक शरीर की सुदृढ़ता नहीं है। अब शोर या जो कुछ नकारात्मक प्रतिक्रिया को पैदा करता है, उसे अपने से होकर गुज़रने दो। अब वह तुम्हारे अन्दर में एक ठोस 'दीवार' से नहीं टकरा रहा है।

जैसा मैंने कहा, पहले-पहल छोटी-मोटी चीज़ों के साथ अभ्यास करो। गाड़ी का हॉर्न, कुत्ते का भौंकना, बच्चों का चिल्लाना, ट्रैफिक जाम। अन्दर में एक प्रतिरोध की दीवार जो बार-बार 'उन घटनाओं से जो घटनी नहीं चाहिए थी', से कष्टपूर्ण रूप से टकराती है, रखने के बजाए, सब कुछ को अपने से होकर गुज़रने दो।

यदि कोई तुमसे ऐसा कुछ कहता है जो अशिष्ट है या चोट पहुँचने के लिए कहा गया है, तो अचेतन प्रतिक्रिया और नकारात्मकता जैसे हमला, बचाव या अलग होने के बजाए, उसे अपने में से हो कर गुज़रने दो। बिल्कुल प्रतिरोध मत करो। मानों वह बुरा महसूस करने के लिए कोई है ही नहीं। यह क्षमा है। इस तरह से तुम अभेद्य बन जाते हो।

यदि तुम चाहो तो तुम अब भी उस व्यक्ति को बता सकते हो कि उसका व्यवहार सही नहीं है। परन्तु उस व्यक्ति में तुम्हारी अन्तर-स्थिति को नियन्त्रित करने की शक्ति नहीं है। तुम अपने नियन्त्रण में हो — ना कि किसी और के; ना ही तुम अपने मन द्वारा नियन्त्रित हो। चाहे वह गाड़ी का अलार्म हो, अशिष्ट व्यक्ति, बाढ़, भूकम्प या समस्त सम्पत्ति को खो देना, प्रतिरोध प्रक्रिया एक ही है।

तुम अब भी बाहर ढूँढ़ रहे हो और बाहर ढूँढ़ने से तुम्हें कुछ नहीं मिलेगा। शायद अगली वर्कशॉप में उत्तर मिले, शायद नयी तकनीक में। तुम्हें मैं कहूँगा:

> **शान्ति को मत खोजो।** जिस स्थिति में तुम इस क्षण में हो इसके अलावा किसी और स्थिति को मत खोजो; वरना, तुम अन्तर-द्वन्द्व और अचेतन प्रतिरोध का आधार तैयार कर रहे होगे।
>
> स्वयं को शान्ति का अनुभव न करने के लिए क्षमा करो। जिस क्षण तुम अपनी अशान्ति को पूरी तरह से स्वीकार कर लोगे, तुम्हारी अशान्ति शान्ति में रूपान्तरित हो जाएगी। जिस चीज़ को भी तुम पूरी तरह से स्वीकार करोगे, वह तुम्हें वहाँ ले जाएगी, तुम्हें शान्ति में ले जाएगी। यह समर्पण का चमत्कार है।

जब तुम जो है उसे स्वीकार करते हो, हर क्षण सर्वोत्तम क्षण बन जाता है। यह साक्षात्कार है।

करुणा का स्वभाव

> **मन द्वारा रचित विलोमों के परे जा कर** तुम एक गहरी झील बन जाते हो। जीवन की सारी परिस्थितियाँ, वहाँ जो कुछ भी होता है, वह झील की सतह है। मौसम के चक्र व ऋतुओं के अनुसार, कभी शान्त, कभी तूफानी। फिर भी, झील अपनी गहराई में हमेशा प्रशान्त रहती है। तुम सम्पूर्ण झील हो, केवल सतह नहीं और तुम अपनी गहराई से जुड़े हुए हो जो कि हरदम पूर्णतः शान्त, स्थिर है।

मानसिक रूप से किसी भी परिस्थिति से चिपक कर तुम बदलाव का विरोध नहीं करते। तुम्हारी अन्तर-शान्ति उस पर निर्भर नहीं करती। तुम सत् में अवस्थित हो — अपरिवर्तनीय, अनादि, मृत्युरहित — और तुम संतुष्टि या खुशी के लिए रूप-आकार के बाहरी जगत पर निर्भर नहीं होते। तुम उनका आनन्द ले सकते हो, उनके साथ खेल सकते हो, नये रूपाकारों की रचना कर सकते हो, सब चीज़ों की सुन्दरता की प्रशंसा कर सकते हो। परन्तु उनमें से किसी से भी स्वयं को जोड़ने की आवश्यकता नहीं होगी।

जब तक तुम सत् के प्रति अजागरूक हो, दूसरे मानवों की वास्तविकता तुमसे दूर ही रहेगी क्योंकि तुमने अपनी नहीं पाई है। तुम्हारा मन उनके रूप को — जिसमें केवल उनका शरीर नहीं है बल्कि मन भी है, पसन्द व नापसन्द करेगा। सच्चा सम्बन्ध तभी सम्भव है जब केवल सत् की सजगता रहती है।

सत् में होने से, तुम दूसरे व्यक्ति के शरीर व मन को बस एक परदे की तरह देखोगे, जिसके पीछे तुम उनके सच्चे स्वरूप को महसूस करोगे; वैसे ही जैसे अपने स्वरूप को करते हो। अतः जब तुम्हारा सामना किसी और की पीड़ा या अचेतन व्यवहार से होता है, तुम जागरूक रहते हो और सत् से जुड़े रहते हो और इसलिए रूपाकार के परे देख पाते हो और उस व्यक्ति के प्रकाशित व शुद्ध सत् को अपने सत् द्वारा महसूस कर पाते हो।

सत्, आत्मा के स्तर पर, सभी पीड़ाओं को भ्रम माना जाता है। रूप से पहचान के कारण पीड़ाएँ होती हैं। इस प्रतीति अहसास के द्वारा यदि वे तैयार हैं तो दूसरों में आत्म-चेतना को जाग्रत करके उद्धार के चमत्कार कभी कभार होते हैं।

तुम्हारे और समस्त प्राणियों के बीच गहरे बन्धन की जागरूकता करुणा है। अगली बार जब तुम कहो, 'मेरे और इस व्यक्ति में कुछ समान नहीं है,' यह याद रखना कि बहुत कुछ समान है तुम दोनों में: अबसे कुछ सालों बाद — दो या सत्तर साल बाद, इससे फ़र्क नहीं पड़ता — तुम दोनों सड़े मुर्दे बन गये होगे, फिर राख और फिर कुछ भी नहीं। यह एक संजीदा व नम्र अहसास है जिसमें घमण्ड के लिए कोई जगह नहीं है।

क्या यह नकारात्मक विचार है? नहीं, यह सत्य है। इसे अनदेखा क्यों करना? इस विषय में, तुममें और हर एक प्राणी में पूर्ण समानताएँ हैं।

> **एक बहुत ही शक्तिशाली आध्यात्मिक अभ्यास है,** भौतिक रूप-आकार की व अपनी नश्वरता पर गहन ध्यान करना है। इसे कहते हैं: मरने

से पहले मरना।

उसमें गहरे उतरो। तुम्हारा भौतिक रूप विलुप्त हो रहा है। अब बचा नहीं है। फिर एक क्षण आता है जब समस्त मानसिक-रूप व विचार भी खत्म हो जाते हैं। फिर भी, तुम होते हो — वह दिव्य उपस्थिति जो तुम हो। तेजोमय, पूर्णतः जाग्रत।

जो वास्तविक है, वह कभी मरा नहीं था, केवल नाम, रूप-आकार और भ्रम का नाश हुआ है।

इस गहन स्तर पर, करुणा निदानकारी बन जाती है। इस स्थिति में तुम्हारा निदानकारी, हिलिंग प्रभाव करने पर नहीं वरन् होने पर, सत् पर आधारित है। जिसके भी सम्पर्क में तुम आओगे, चाहे उन्हें पता हो या नहीं, वह तुम्हारी उपस्थिति द्वारा छू जाएगा और उस शान्ति द्वारा प्रभावित होगा जो तुमसे निकल रही है।

जब तुम पूरी तरह जागरूक होते हो और तुम्हारे आसपास के लोग अजागरूक व्यवहार करते हैं, तो तुम्हें प्रतिक्रिया करने की ज़रूरत महसूस नहीं होती, तो तुम उसे कोई वास्तविकता नहीं देते। तुम्हारी शान्ति इतनी विस्तृत और गहरी है कि वह सब जो शान्ति नहीं है वह गायब हो जाता है, मानों उसका अस्तित्व ही नहीं था। तब क्रिया और प्रतिक्रिया का कार्मिक चक्र टूट जाता है।

पशु, पक्षी, फूल तुम्हारी शान्ति को महसूस करेंगे और प्रकट करेंगे। तुम सत् द्वारा सिखाओगे, ईश्वर की शान्ति को प्रदर्शित करके सिखाओगे।

तुम 'जगत का प्रकाश', शुद्ध चेतना का प्रकटीकरण, बन जाते हो और तुम कारण के स्तर पर ही पीड़ा को दूर कर देते हो। तुम जगत से अचेतना को मिटा देते हो।

समर्पण का प्रज्ञान

इस क्षण में तुम्हारी चेतना की विशेषता ही वह मुख्य कारक है जो यह निर्धारित करती है कि भविष्य का तुम्हारा क्या अनुभव होगा। अतः समर्पण वह बहुत ज़रूरी चीज़ है जो तुम्हें करनी चाहिए। सकारात्मक परिवर्तन लाने के लिए हर कर्म तुम जो करते हो वह द्वितीय है। चेतना की समर्पणरहित स्थिति से कोई भी सच्चा सकारात्मक कर्म नहीं उदित हो सकता।

कुछ लोगों के लिए समर्पण का नकारात्मक अर्थ हो सकता है। जैसे पराजित होना, हाथ ऊपर कर देना, जीवन की चुनौतियों का सामना न कर पाना, आलस्यपूर्ण होना इत्यादि। सच्चा समर्पण, फिर भी, कुछ अलग ही है। इसका मतलब यह नहीं है कि जिस परिस्थिति में तुम स्वयं को पाओ, उसका निष्क्रिय रूप में सामना करो और उसे बदलने

के लिए कुछ भी न करो। ना ही इसका मतलब है सकारात्मक कर्मों को शुरू ना करना व योजना बनाना बन्द कर देना।

> **आत्मसमर्पण एक साधारण उपाय है,** जीवन के प्रवाह का विरोध करने के बजाए उसे गहन प्रज्ञान करने का। वर्तमान में ही तुम जीवन के प्रवाह का अनुभव कर सकते हो। अतः समर्पण करने का अर्थ है वर्तमान क्षण को बिना शर्त, बिना किसी रोक के स्वीकार करना।
>
> जो है उसके प्रति अन्तर-प्रतिरोध को त्यागना समर्पण है।

मानसिक आँकन व भावनात्मक नकारात्मकता द्वारा जो है उसे 'ना' कहना अन्तर-प्रतिरोध है। जब चीज़ें गलत होती हैं, तब यह अधिक मुखरित हो उठता है, जिसका अर्थ है कि मन की अपेक्षाओं व माँगों में वह जो है उसमें बड़ा अन्तराल है। यह पीड़ा-अन्तराल है।

यदि तुम काफ़ी जीवन जी चुके हो तो यह जानते हो कि कई बार चीज़ें "गलत हो जाती" हैं। यदि तुम पीड़ा व दुःख को जीवन से हटाना चाहते हो तो ऐसे क्षणों में ही समर्पण का अभ्यास करना ज़रूरी होता है। जो है उसे स्वीकारने से तुम तुरन्त ही मन की पहचान से मुक्त हो जाते हो और अतः आत्मा से जुड़ जाते हो। प्रतिरोध ही मन है।

समर्पण विशुद्ध रूप से आन्तरिक प्रक्रिया है। इसका अर्थ यह बिल्कुल नहीं है कि तुम बाहरी स्तर पर कुछ कर नहीं सकते और परिस्थिति में बदलाव नहीं ला सकते। वास्तव में, जब तुम समर्पण करते हो तो पूरी परिस्थिति को स्वीकार नहीं करने की ज़रूरत है बल्कि एक छोटी-सी इकाई को, जिसे वर्तमान कहते हैं। उदाहरण के लिए, यदि तुम कहीं कीचड़ में फँस गये हो, तुम यह नहीं कहोगे; "ठीक है, मैं कीचड़ में फँसे रहूँगा।" छोड़ देना समर्पण नहीं है।

> **तुम्हें अनैच्छिक या असुखकारी जीवन-परिस्थिति को स्वीकार करने की ज़रूरत नहीं है।** ना ही तुम्हें स्वयं को यह कह कर झुठलाने की ज़रूरत है कि कुछ भी गलत नहीं है। नहीं। तुम्हें यह पता है कि तुम्हें वहाँ से बाहर निकलना है। किसी प्रकार की मानसिक टीका-टिप्पणी किए बिना फिर तुम अपना ध्यान सँकरा करके वर्तमान में लाते हो।
>
> इसका अर्थ है कि वर्तमान को आंका नहीं जाता। इसलिए, ना कोई प्रतिरोध होता है, ना ही कोई भावनात्मक नकारात्मकता। तुम इस क्षण के 'होने' को स्वीकार करते हो।
>
> फिर तुम कर्म करते हो और उस परिस्थिति से निकलने के लिए जो करना ज़रूरी होता है वह करते हो।

ऐसे कर्म को मैं सकारात्मक कर्म कहता हूँ। यह उस नकारात्मक कर्म, जो क्रोध, हताशा व निराशा से उपजता है, से अधिक प्रभावशाली होता है। जब तक तुम्हें तुम्हारा ऐच्छिक फल न मिल जाए, वर्तमान की टीका-टिप्पणी किए बगैर समर्पण का अभ्यास

करना जारी रखो।

जो मैं कह रहा हूँ उसे मैं एक दृष्टान्त के रूप में तुम्हें समझाता हूँ। एक रात तुम एक रास्ते पर, जो गहरे कोहरे से ढंका हुआ है, चले जा रहे हो। परन्तु तुम्हारे पास तेज प्रकाश देनेवाली टॉर्च है जो घने कोहरे को चीर कर तुम्हारे सामने एक सँकरा-सा स्पष्ट रास्ता बना देती है। यह कोहरा तुम्हारी जीवन परिस्थिति है, जिसमें भूत और भविष्य सम्मिलित हैं; टॉर्च तुम्हारी सजग उपस्थिति है; स्पष्ट जगह वर्तमान है।

समर्पण विहीनता तुम्हारे मानसिक रूप को, अहम् के कवच को कठोर बना देती है और इसलिए अलगाव के तीव्र भाव को जन्म देती है। तुम्हारे चारों ओर का संसार व विशेष तौर पर लोग धमकी भरे लगने लगते हैं। फिर आँकने द्वारा दूसरों का नाश करने की अचेतन बाध्यता व दूसरों पर हावी होने तथा उनके साथ प्रतिस्पर्धा करने की ज़रूरत का उदय होता है। प्रकृति भी तुम्हारी दुश्मन बन जाती है और तुम्हारा दृष्टिकोण व समझ दोनों ही भय के अधीन हो जाते हैं। मानसिक बीमारी जिसे पैरानाएअ, संविभ्रम कहते हैं, चेतना की कार्य वैकल्पिक स्थिति, जो कि सामान्य है, का थोड़ा अधिक तीव्र रूप है।

ना केवल तुम्हारा मानसिक रूप, बल्कि तुम्हारा भौतिक रूप — तुम्हारा शरीर भी — प्रतिरोध के कारण कठोर व जड़ बन जाता है। शरीर के अलग-अलग हिस्सों में तनाव उभरता है और पूरा शरीर संकुचित हो जाता है। शरीर के द्वारा प्रवाहित प्राणशक्ति, जो कि स्वस्थ रूप से कार्य करने के लिए आवश्यक है, वह जकड़ जाती है, सीमित हो जाती है।

शारीरिक व्यायाम और विशिष्ट तरह की शारीरिक थैरेपी इस प्रवाह के सुचारू रूप में बहने में सहायक हो सकते हैं। परन्तु यदि तुम अपने दैनिक जीवन में समर्पण का अभ्यास नहीं करोगे तो यह सारी चीज़ें तुम्हें अस्थाई रूप से राहत देंगी क्योंकि प्रतिरोधक वृत्ति, कारण अभी भी गायब नहीं हुआ है।

तुम्हारे अन्दर ऐसा कुछ है जो कि जीवन-परिस्थिति द्वारा बनी क्षणिक परिस्थितियों में भी अप्रभावित रहता है और केवल समर्पण द्वारा ही तुम उस तक पहुँच पाते हो। यह तुम्हारा जीवन है, तुम्हारा सत् — जो कि वर्तमान के समयातीत लोक में शाश्वत रूप से विद्यमान है।

> **यदि तुम्हें अपनी जीवन परिस्थिति असन्तुष्टिकारक या फिर असहनीय लगती है,** तो केवल समर्पण द्वारा ही तुम उस अचेतन प्रतिरोधक वृत्ति को तोड़ पाओगे जो कि इस परिस्थिति को उत्पन्न करती है।

समर्पण, कर्म करने, बदलाव लाने व लक्ष्य प्राप्त करने के पूरी तरह अनुकूल है। परन्तु समर्पित स्थिति में, बिल्कुल भिन्न शक्ति, भिन्न विशेषता तुम्हारे कर्मों में प्रवाहित होती है। समर्पण तुम्हें आत्मा की स्रोत शक्ति से पुनः जोड़ देता है और यदि तुम्हारे कर्म आत्मा से परिपूरित हैं तो वह जीवन-शक्ति का एक आनन्दपूर्ण उत्सव बन जाता है और तुम्हें

वर्तमान में अधिक गहरे ले जाता है।

प्रतिरोध न करने से, तुम्हारी चेतना की विशेषता, गुण और इसलिए जो भी तुम कर रहे हो या रच रहे हो उसकी विशेषता, वह अगणित रूप से बढ़ जाती है। परिणाम फिर स्वयं बोलते हैं और उस गुण को प्रतिबिम्बित करते हैं। हम इसे — 'समर्पित कर्म' कह सकते हैं।

समर्पण की स्थिति में, तुम्हें स्पष्ट रूप से दिखता है कि क्या करना है और तुम क्रियाशील होते हो; एक समय पर एक काम करते हो और एक समय पर एक चीज़ पर केन्द्रित होते हो।

प्रकृति से सीखो: देखो कैसे सबकुछ पूरा हो जाता है और कैसे बिना किसी असन्तोष व अप्रसन्नता के जीवन का चमत्कार प्रकट होता है।

इसीलिए येशु ने कहा है: 'कुमुदिनियों को देखो, वे किस प्रकार बढ़ती हैं; ना वे कठोर श्रम करती हैं और ना ही चक्कर काटती हैं।'

यदि तुम्हारी समस्त परिस्थिति असन्तोषदायी और दुखदायी है तो इस क्षण को अलग कर लो और जो है उसे समर्पण कर दो। वह होगा टॉर्च का कोहरे को काटना। तुम्हारी चेतना की स्थिति फिर बाहरी दशाओं द्वारा नियन्त्रित होना बन्द कर देगी। तुम प्रतिक्रिया और प्रतिरोध से नहीं कार्यरत हो।

फिर परिस्थिति के मुख्य बिन्दुओं को देखो। अपने से पूछो, 'क्या परिस्थिति को बदलने के लिए, उसमें सुधार लाने के लिए या स्वयं को उससे हटाने के लिए, मैं कुछ कर सकता हूँ? यदि हाँ, तो उचित कर्म करो।'

उन सैंकड़ों चीज़ों पर केन्द्रित मत हो जो तुम्हें भविष्य में करनी पड़ सकती हैं, अभी उस पर केन्द्रित हो जो तुम इस क्षण में कर सकते हो। इसका मतलब यह नहीं है कि तुम योजनाएँ बनाना बन्द कर दो। हो सकता है योजना बनाना वह काम है जो तुम अभी कर सकते हो। लेकिन इस बात पर ध्यान रहे कि तुम 'मानसिक चलचित्र' जो तुम्हें हरदम भविष्य में दिखाता है, न चलाते रहो और इसलिए वर्तमान को खो दो। कोई भी कर्म तुरन्त फलीभूत नहीं होता है। जब तक न हो — जो है उसका प्रतिरोध न करो।

यदि तुम कुछ कर नहीं सकते और परिस्थिति से स्वयं को निकाल भी नहीं सकते तो उस परिस्थिति के माध्यम से समर्पण में और गहरे उतरो, वर्तमान में और गहरे पैठो, आत्मा से गहरे जुड़ जाओ।

जब तुम वर्तमान के इस समयातीत आयाम में प्रवेश करते हो तो तुम्हारे ज़्यादा कुछ किए बिना ही विभिन्न अज़ब तरीकों से बदलाव आ जाता है। जीवन सहायक व सहयोगी बन जाता है। यदि आन्तरिक कारक जैसे भय, अपराधभाव या जड़ता तुम्हें कर्म करने से रोकते हैं तो वे तुम्हारी चेतन उपस्थिति के प्रकाश में गायब हो जाएँगे।

‘मुझे कोई परेशान नहीं कर सकता’ या ‘मुझे फ़र्क नहीं पड़ता’ जैसे मनोवृत्तियों को समर्पण मत समझो। यदि तुम पास से देखोगे तो पाओगे कि ऐसी मनोवृत्ति छिपी हुई नाराज़गी के रूप में नकारात्मकता से दूषित है और समर्पण ऐसा बिल्कुल नहीं है बल्कि मुखौटा पहने प्रतिरोध है।

जब तुम समर्पण कर रहे हो तो अपने ध्यान को अन्दर की ओर मोड़ कर देखो कि तुम्हारे अन्तर में कहीं प्रतिरोध का कोई अंश तो नहीं बचा है। ऐसा करते समय बहुत ही सतर्क रहो; वरना, विचार या अस्वीकृत भावना के रूप में प्रतिरोध शायद किसी अन्धेरे कोने में छिपा बैठा रहे।

मानसिक शक्ति से आध्यात्मिक शक्ति की ओर

इस बात से शुरुआत करो कि प्रतिरोध है। जब प्रतिरोध उभरे तो उपस्थित रहो। देखो कि कैसे तुम्हारा मन उसका निर्माण करता है, परिस्थिति को, तुमको और दूसरों को, कैसे नाम देता है। परिस्थिति से जुड़ी विचार-प्रक्रिया का निरीक्षण करो। संवेग की शक्ति को महसूस करो।

प्रतिरोध का साक्षी बनने से तुम देखोगे कि उसका कोई उद्देश्य नहीं है। वर्तमान में अपने पूरे ध्यान को केन्द्रित करके, अचेतन प्रतिरोध को चेतन बना दिया जाता है और उससे उसका अन्त हो जाता है।

तुम जागरूक और नाखुश, जागरूक और नकारात्मकता में नहीं हो सकते। नकारात्मकता, अप्रसन्नता या पीड़ा चाहे किसी भी रूप में हो, इसका मतलब है कि प्रतिरोध है और प्रतिरोध हमेशा अचेतन होता है।

क्या तुम अप्रसन्नता को चुनोगे? यदि तुमने चुना नहीं तो वह कैसे उभरी? उसका उद्देश्य क्या है? उसे कौन जीवित रख रहा है?

यदि तुम अपनी नाखुश भावनाओं के प्रति सजग हो तो सच तो यह है कि तुम उनसे जुड़े हो और बाध्यकारी सोचने से उसकी प्रक्रिया को सक्रिय रखते हो। यह सब अचेतन है। यदि तुम जागरूक होते, जिसका मतलब है वर्तमान में पूर्णरूप से उपस्थित होते, तो समस्त नकारात्मकताएँ तुरन्त ही विलीन हो जातीं। वे तुम्हारी उपस्थिति में जीवित नहीं रह सकतीं। वे तुम्हारी अनुपस्थिति में ही जीवित रह सकती हैं।

तुम्हारी उपस्थिति में पीड़ा-देह भी बहुत लम्बे समय तक जीवित नहीं रह सकती। समय देकर तुम अपनी अप्रसन्नता को जीवित रखते हो। यही उसकी जीविका है। वर्तमान क्षण में तीव्र जागरूक रखकर समय को हटा दो और वह मर जाएगा। पर क्या तुम चाहते हो कि वह मर जाए? क्या तुम उससे सही में उकता गये हो? उसके बिना तुम कौन होगे?

जब तक तुम समर्पण का अभ्यास नहीं करते, तब तक आध्यात्मिक आयाम कुछ

ऐसा होगा जिसके बारे में तुमने पढ़ा होगा? बात की होगी? उसके बारे में खुश हुए होगे, किताबें लिखी होगी, सोचा होगा, विश्वास किया होगा — या फिर नहीं भी किया हो, जो भी स्थिति हो, इससे कोई फ़र्क नहीं पड़ता।

> **जब तक तुम समर्पण नहीं करते,** आध्यात्मिक आयाम तुम्हारे जीवन की जीवन्त वास्तविकता नहीं बनता।
>
> जब करते हो, तो जो शक्ति तुम से प्रसारित होती है और तुम्हारे जीवन को संचालित करती है, मन की शक्ति, जो अभी भी हमारे संसार को चलाती है, एक उच्च स्पन्दनोंवाली होती है।
>
> समर्पण के द्वारा इस जगत में आध्यात्मिक शक्ति आती है। यह तुम्हारे, दूसरे मानवों या ग्रह पर किसी और जीवन के लिए पीड़ा या दु:ख उत्पन्न नहीं करती है।

व्यक्तिगत सम्बन्धों में समर्पण

यह सच है कि केवल अचेतन व्यक्ति ही दूसरों का इस्तेमाल करेगा या उनको छलेगा, परन्तु यह भी उतना ही सच है कि उसे भी छला जा सकता है। यदि तुम दूसरों में अचेतन व्यवहार का प्रतिरोध करो या उससे लड़ो तो तुम स्वयं अचेतन बन जाते हो।

परन्तु समर्पण का अर्थ यह नहीं है कि तुम स्वयं को अचेतन लोगों द्वारा इस्तेमाल किए जाने दो। बिलकुल नहीं। व्यक्ति को स्पष्टता व दृढ़ता से 'ना' कहना बिल्कुल सम्भव है या परिस्थिति से दूर चले जाना और साथ ही अन्तर में प्रतिरोध न रखना।

> **जब तुम किसी व्यक्ति या परिस्थिति को 'ना' कहते हो,** तो उसे प्रतिक्रिया नहीं बल्कि उस स्पष्ट अन्तर्दृष्टि से उभरना चाहिए कि इस क्षण में तुम्हारे लिए क्या सही या क्या गलत है।
>
> उसे प्रतिक्रिया-रहित 'ना' होने दो, एक उच्च गुण-सम्पन्न 'ना' एक 'ना' जो कि समस्त नकारात्मकता से मुक्त है और इसीलिए और पीड़ा को नहीं जन्म देता।
>
> यदि तुम समर्पण नहीं कर सकते, तुरन्त ही कुछ करो: अपने लिए आवाज़ उठाओ या फिर कुछ ऐसा करो जिससे कि परिस्थिति में बदलाव आए — या स्वयं को उससे हटा दो। अपने जीवन का उत्तरदायित्व लो।

ना तो अपनी सुन्दर, प्रकाशित अन्तर-आत्मा और ना ही इस पृथ्वी को नकारात्मकता द्वारा प्रदूषित करो। चाहे तुम्हारे अन्दर किसका भी वास हो, किसी भी रूप में अप्रसन्नता मत बाँटो।

> **यदि तुम कुछ कर नहीं सकते** — मानो जेल में हो, उदाहरण के लिए — तो तुम्हारे पास दो चुनाव हैं: प्रतिरोध या समर्पण। बाहरी परिस्थितियों से बन्धन या अन्तर मुक्ति। पीड़ा या अन्तर-शान्ति।

समर्पण द्वारा तुम्हारे सम्बन्ध गहन रूप से परिवर्तित हो जाएँगे। यदि तुम जो है उसे कभी स्वीकार नहीं कर पाते, तो तुम किसी को भी वे जैसे हैं वैसा स्वीकार नहीं कर पाओगे। तुम आँकोगे, आलोचना करोगे, नाम दोगे, अस्वीकार करोगे या लोगों को बदलने की कोशिश करोगे।

इसके अलावा, यदि तुम वर्तमान को भविष्य में पहुँचने का एक साधन बनाते रहोगे, तो तुम मिलनेवाले हर व्यक्ति को या उनको जिनसे तुम्हारा सम्बन्ध है एक साधन बना लोगे। सम्बन्ध — मानव — तुम्हारे लिए महत्त्वहीन हो जाते हैं, उनका कोई महत्त्व नहीं रहता तुम्हारे लिए। तुम्हें सम्बन्ध से क्या मिलेगा, यह तुम्हारे लिए मुख्य बात होती है, चाहे वह भौतिक प्राप्ति, आधिपत्य का भाव, शारीरिक सुख या किसी प्रकार का अहमीय तुष्टि।

समर्पण किस तरह से सम्बन्ध में कार्य कर सकता है — इसका मैं वर्णन करता हूँ।

> **जब तुम किसी बहस में या द्वन्द्व में उलझ जाते हो,** शायद तुम्हारे साथी के साथ या किसी नज़दीकी के साथ, यह देखो कि जब तुम्हारे मत पर हमला होता है तो तुम कितने सुरक्षात्मक हो जाते हो। या उस आक्रामकता की शक्ति को महसूस करो जो तुम दूसरे व्यक्ति के मत पर हमला करने के लिए इस्तेमाल करते हो।
>
> अपने मतों और दृष्टिकोणों के प्रति अपने लगाव का निरीक्षण करो। स्वयं के सही और दूसरे व्यक्ति के गलत होने के पीछे छिपी मानसिक संवेगात्मक शक्ति को महसूस करो। यह अहमीय, मन की शक्ति है। उसे स्वीकार करके, उसे पूरी तरह से महसूस करके तुम उसे चेतन बना देते हो।
>
> फिर एक दिन, बहस के बीच में, तुम्हें अचानक अहसास होता है कि तुम्हारे पास चुनाव है और तुम अपनी सारी प्रतिक्रियाओं को छोड़ देते हो — यह देखने के लिए कि क्या होगा। तुम समर्पण करते हो।

'ठीक है तुम सही हो,' केवल ऊपरी तौर पर यह कहना और चेहरे पर इस भाव को रखना कि 'मैं इस बचकानी अचेतना के ऊपर हूँ,' प्रतिक्रिया को छोड़ना नहीं है। यह प्रतिक्रिया को एक दूसरे स्तर पर खिसका देना है, जहाँ पर अहमीय मन अभी भी नियन्त्रण में है और स्वयं को उच्च मानता है। समस्त मानसिक-संवेगात्मक शक्ति जो तुम्हारे अन्दर में है और जो प्रभुत्व के लिए लड़ रही थी, को पूरी तरह त्यागने के विषय में मैं बात कर रहा हूँ।

अहम् बहुत ही चलाक है, इसलिए तुम्हें बहुत सतर्क, बहुत उपस्थित और स्वयं से पूरी

तरह ईमानदार होना है यह देखने के लिए कि क्या तुमने वास्तव में मानसिक दृष्टिकोण से पहचान को त्याग दिया है। अतः स्वयं को अपने मन से मुक्त कर लिया है।

> **यदि अचानक तुम्हें हल्केपन, स्पष्टता और गहरी प्रशान्ति का अनुभव होता है,** तो यह इस बात का संकेत है कि तुमने वास्तव में समर्पण किया है। फिर निरीक्षण करना कि दूसरे व्यक्ति की मानसिक दृष्टिकोण को क्या होता है क्योंकि अब अपने प्रतिरोध के द्वारा तुम उसे शक्ति प्रदान नहीं कर रहे होते हो। जब मानसिक दृष्टिकोण से पहचान रास्ता नहीं रोकती, सच्चा आदान-प्रदान होता है।

प्रतिरोध न करने का मतलब यह नहीं है कि कुछ भी ना करो। इसका मतलब है कि कुछ भी 'करना' प्रतिक्रिया रहित हो जाता है। पूर्व के देशों की 'मार्शल आर्ट' के अभ्यास के पीछे का गहन प्रज्ञान याद है: विरोधी की ताकत का प्रतिरोध मत करो। पराजित करने के लिए छोड़ दो।

ऐसा कहने के बाद, जब तुम गहनतम् उपस्थिति की स्थिति में होते हो तो 'कुछ भी न करना' लोगों और परिस्थितियों का एक शक्तिशाली उद्धारक है।

यह चेतना की सामान्य स्थिति में प्रकट होनेवाले भय, जड़ता और असमंजस से उत्पन्न होनेवाली अक्रियाशीलता से बिल्कुल भिन्न है। सच्चे 'कुछ भी न करना' का अर्थ है आन्तरिक अप्रतिरोध और गहन सतर्कता।

दूसरी ओर, यदि कुछ करने की आवश्यकता है, तुम अपने प्रतिबद्ध मन से प्रतिक्रिया नहीं करोगे, बल्कि तुम अपनी चेतन उपस्थिति से परिस्थिति का ज़वाब दोगे। इस स्थिति में, तुम्हारा मन धारणाओं, अहिंसा की धारणा से भी, स्वतन्त्र होता है। अतः कौन बता सकता है कि तुम क्या करोगे?

अहम् का ऐसा मानना है कि तुम्हारे प्रतिरोध में तुम्हारी सामर्थ्य निहित है, जबकि सच तो यह है कि प्रतिरोध आत्मा से, जो कि सच्ची सामर्थ्य का स्रोत है, तुम्हें दूर कर देता है।

प्रतिरोध कमज़ोरी है और सामर्थ्य का मुखौटा पहने भय है। अहम् जिसे कमज़ोरी के रूप में देखता है वह तुम्हारी आत्मा है, अपनी शुद्ध, अबोध व शक्ति के साथ। जिसे वह सामर्थ्य समझता है वह कमज़ोरी है। अतः अहम् निरन्तर प्रतिरोध वृत्ति धारण किए रहता है और उस तथाकथित 'कमज़ोरी' को ढँकने का स्वांग रचता है, जो कि वास्तव में तुम्हारी सामर्थ्य है।

जब तक समर्पण नहीं होता, मानवीय वार्तालापों में, अचेतन भूमिकाएँ प्रदर्शित होती रहती हैं। समर्पण में, तुम्हें अहम् के बचाव या उसके झूठे मुखौटे नहीं चाहिए होते हैं। तुम बहुत ही सादे, बहुत ही सच्चे बन जाते हो। अहम् कहता है, 'यह खतरे की बात है', 'तुम्हें चोट लग जाएगी। तुम कमज़ोर हो जाओगे।'

अहम् को यह नहीं पता होता है कि प्रतिरोध त्यागने द्वारा ही, 'कमज़ोर' होने द्वारा ही, तुम अपनी सच्ची व मूलभूत अभेद्यता को खोज सकते हो।

अध्याय नौ

बीमारी और पीड़ा का रूपान्तरण

बीमारी को आत्मज्ञान में रूपान्तरित करना

बिना किसी शर्त के जो है उसको अन्तर से स्वीकार करना समर्पण है। हम तुम्हारे जीवन के बारे में बात कर रहे हैं — इस क्षण में — तुम्हारे जीवन की परिस्थितियों और दशाओं के बारे में नहीं और ना ही जिसे मैं तुम्हारी जीवन परिस्थिति कहता हूँ।

बीमारी तुम्हारी जीवन परिस्थिति का एक हिस्सा है। उसका भी भूत और भविष्य है। जब तक तुम अपनी जागरूक उपस्थिति द्वारा वर्तमान की कल्याणकारी शक्ति को सक्रिय नहीं करते तब तक भूत और भविष्य का एक निरन्तर प्रवाह होता है। जैसा कि तुम्हें पता है तुम्हारी जीवन परिस्थिति के पीछे की विभिन्न दशाएँ, जिनका समय में अस्तित्व है, कुछ गहन है, अधिक सारभूत है: तुम्हारा जीवन, समयातीत वर्तमान में तुम्हारी आत्मा।

वर्तमान में कोई समस्याएँ नहीं हैं और इसलिए कोई बीमारी भी नहीं है। तुम्हारी दशा को दूसरों द्वारा दिये गये नाम में विश्वास उस दशा को कायम रखता है, उसे शक्ति देता है और अस्थाई असन्तुलन को भासमान दृढ़ वास्तविकता बना देता है। वह उसे न केवल वास्तव बनाता है और दृढ़ता देता है बल्कि उसे समय में निरन्तरता देता है जो पहले नहीं थी।

> **इस क्षण पर केन्द्रित होने से** और उसे मानसिक रूप से नाम न देने से, वह बीमारी इनमें से एक या कई कारकों में बदल जाती है: शारीरिक पीड़ा, कमज़ोरी, बेचैनी और अक्षमता। यही है जिसे तुम वर्तमान को समर्पण करते हो। तुम 'बीमारी' के विचार को समर्पित नहीं होते हो।
>
> पीड़ा को, तुम्हें वर्तमान क्षण में, गहन चेतन उपस्थिति में, जाने के लिए बाध्य करने दो। उसे आत्म-अनुभव के लिए प्रयोग करो।

समर्पण, जो है उसे नहीं रूपान्तरित करता है, कम से कम प्रत्यक्ष रूप से तो नहीं। समर्पण तुम्हें रूपान्तरित कर देता है। जब तुम रूपान्तरित हो जाते हो, तुम्हारा पूरा संसार रूपान्तरित हो जाता है क्योंकि संसार एक प्रतिबिम्ब मात्र है।

बीमारी समस्या नहीं है। जब तक तुम्हारा अहमीय मन नियन्त्रण में होता है — तुम

समस्या हो।

> **जब तुम बीमार या कुछ करने में असमर्थ हो** तो यह मत सोचो कि तुम किसी तरह से असफल हुए हो, अपराधीभाव मत रखो। तुम्हारे साथ अन्याय करने के लिए जीवन को मत कोसो और स्वयं को भी मत कोसो। यह सब प्रतिरोध है।
>
> यदि तुम्हें कोई बड़ी बीमारी है तो उसे आत्मज्ञान पाने के लिए प्रयोग करो। तुम्हारे जीवन में जो कुछ भी 'खराब' होता है — उसका प्रयोग आत्मज्ञान पाने के लिए करो।
>
> बीमारी से समय को निकाल दो। उसे कोई भूत या भविष्य न दो। उसे तुम्हें गहन वर्तमान-क्षण की जागरूकता में चले जाने दो — और देखो कि क्या होता है।

एक कीमियागीर बन जाओ। साधारण धातु को स्वर्ण में बदल दो, पीड़ा को जागरूकता में, तबाही को आत्मज्ञान में रूपान्तरित कर दो।

क्या तुम गम्भीर रूप से बीमार हो गये हो और मैंने जो अभी कहा है उससे अब क्रोधित महसूस कर रहे हो? फिर तो यह स्पष्ट संकेत है कि बीमारी तुम्हारे आत्म-भाव का हिस्सा बन गयी है और अब तुम अपनी पहचान को बचा रहे हो — साथ ही अपनी बीमारी की भी रक्षा कर रहे हो।

वह दशा जिसे 'बीमारी' कहा जाता है उसका जो तुम वास्तव में हो, उससे कोई सम्बन्ध नहीं है।

जब कभी भी किसी तरह की विपदा आती है या कुछ सही में 'गलत' हो जाता है — बीमारी, अपंगता, घर या सद्भाग्य का नाश, या सामाजिक प्रतिष्ठा, घनिष्ठ सम्बन्ध में दरार, किसी प्रियजन की मृत्यु या पीड़ा या तुम्हारी स्वयं की मृत्यु मंड़राती है — यह जानों कि इसका दूसरा पहलू भी है कि तुम कुछ विशिष्ट से एक कदम दूर हो — पीड़ा और दुःख की मूल धातु के एक पूरा कीमियागीरी रूपान्तरण द्वारा सोने में बदलने की प्रक्रिया। वह एक कदम समर्पण है।

मेरा कहने का मतलब यह नहीं है कि तुम ऐसी परिस्थिति में खुश रहोगे। ऐसा नहीं होगा। परन्तु भय और पीड़ा, अन्तर-शान्ति और स्तब्धता जो कि एक गहन स्थान से उभरती है — अप्रकट से उभरती है, में रूपान्तरित हो जाएगा। यह 'ईश्वर की प्रशान्ति है जो समस्त समझ के परे है।' उसकी तुलना में, प्रसन्नता बहुत ही खोखली चीज़ है।

इस प्रकाशित शान्ति के साथ आता है यह अहसास — मन के स्तर पर नहीं परन्तु तुम्हारी आत्मा की गहराई में — कि तुम अमर हो, शाश्वत हो। यह कोई धारणा नहीं है। यह परम निश्चय है जिसे किसी दूसरे स्रोत का प्रमाण या बाहरी सबूत नहीं चाहिए।

पीड़ा को शान्ति में बदलना

कुछ विशिष्ट-विषम परिस्थितियों में, शायद तुम्हारे लिए वर्तमान को स्वीकार करना असम्भव हो। परन्तु तुम्हें समर्पण करने के लिए दूसरा मौका ज़रूर मिलता है।

> **तुम्हारा पहला मौका है हर क्षण की वास्तविकता को हर क्षण समर्पित होना।** इस ज्ञान के साथ है कि जो है उसे बिना कुछ नहीं किया जा सकता — क्योंकि वह है ही — तुम जो है उसे स्वीकृति देते हो और जो नहीं है उसे स्वीकार करते हो।
>
> फिर तुम वह करते हो जो तुम्हें करना चाहिए, जो परिस्थिति की माँग है।
>
> यदि तुम स्वीकृति की इस स्थिति में रहते हो, तुम और नकारात्मकता, और पीड़ा, और अप्रसन्नता का निर्माण नहीं करते। तुम फिर प्रतिरोधरहित स्थिति में रहते हो, जो कृपा और हलकेपन की स्थिति है और जिसमें कोई संघर्ष नहीं है।

जब कभी तुम ऐसा नहीं कर पाते हो, जब कभी भी तुम मौका गँवा देते हो — इसलिए क्योंकि तुम पर्याप्त जागरूक उपस्थिति का संचार नहीं कर पा रहे हो, जिससे कि अचेतन प्रतिरोध की प्रवृत्ति न उभरे, या फिर इसलिए क्योंकि दशा इतनी विषम है कि तुम उसको बिल्कुल भी स्वीकार नहीं कर सकते — तब तुम किसी रूप में दर्द व पीड़ा की रचना कर रहे हो।

ऐसा लग सकता है कि परिस्थिति पीड़ा उत्पन्न कर रही है परन्तु ऐसा नहीं है — तुम्हारा प्रतिरोध उत्पन्न कर रहा है।

> **अब तुम्हारा समर्पण का दूसरा मौका आता है:** यदि तुम जो बाहर है उसे स्वीकार नहीं कर पाते, तो अन्दर जो है उसे स्वीकार करो। यदि तुम बाहरी परिस्थितियों को स्वीकार नहीं कर पाते तो आन्तरिक परिस्थिति को स्वीकार करो।
>
> इसका अर्थ है: पीड़ा का प्रतिरोध मत करो। उसे वहाँ रहने की सहमति दो। विषाद, हताशा, भय, अकेलापन, जिस भी रूप में पीड़ा उभरती है उसे समर्पण करो। मानसिक रूप से नाम दिये बिना उसके साक्षी बनो। उसे अपना लो।
>
> फिर देखो कि समर्पण का चमत्कार कैसे गहरी पीड़ा को गहरी शान्ति में रूपान्तरित कर देता है। यह तुम्हारा सूली पर चढ़ना है। उसे अपना पुनर्जन्म और स्वर्गारोहण बन जाने दो।

जब तुम्हारी पीड़ा गहरी है तो समर्पण की सारी बातें बेकार और अर्थहीन लगेंगी। जब

तुम्हारी पीड़ा गहरी है तो तुम्हें समर्पण करने के बजाए भागने की ज़्यादा इच्छा होगी। जो तुम महसूस कर रहे हो उसे महसूस नहीं करना चाहते। इससे ज़्यादा सामान्य और क्या हो सकता है? परन्तु भागने का कोई रास्ता नहीं है।

कल्पित भागने के कई तरीके हो सकते हैं — काम, पीना, नशा करना, गुस्सा, दूसरे पर थोपना, अन्दर दबा देना, आदि-आदि — परन्तु इनमें से कोई भी तुम्हें पीड़ा से मुक्त नहीं करता। पीड़ा के प्रति अचेतन बनने से वह अपनी तीव्रता में कम नहीं हो जाती है। जब तुम भावनात्मक पीड़ा को नकारते हो, तो तुम जो भी करते हो या सोचते हो, साथ ही साथ तुम्हारे सम्बन्ध भी दूषित हो जाते हैं। तुमसे जो शक्ति प्रसारित होती है उसके द्वारा तुम उसकी मानों भविष्यवाणी करते हो और दूसरे लोग बिन बोले ही उसे समझ जाते हैं।

यदि वे अचेतन हैं, तो हो सकता है कि वे किसी रूप में तुम पर हमला या तुम्हें चोट पहुँचाने के लिए बाध्य हो या तुम अपनी पीड़ा को अजागरूक रूप में उन पर थोप कर उन्हें चोट पहुँचाओ। तुम्हारी अन्तर-स्थिति के सदृश्य ही तुम चीज़ों को अपनी ओर आकर्षित व प्रकट करते हो।

जब निकलने का कोई भी रास्ता नहीं बचता, तब भी एक रास्ता जरूर होता है। इसलिए पीड़ा से मुँह न मोड़ो। उसका सामना करो। पूरी तरह से महसूस करो। उसे महसूस करो — उसके बारे में सोचो नहीं! यदि ज़रूरी हो तो व्यक्त करो, परन्तु अपने मन में उसके चारों ओर एक कहानी मत बनाओ। भावना को अपना पूरा ध्यान दो, ना कि व्यक्ति, घटना, परिस्थिति जिसके कारण उसे यह हुआ है।

मन को उस पीड़ा का उपयोग करके तुम्हें बेचारे होने की पहचान मत बना देने दो। अपने को बेचारा समझने और दूसरों को अपनी कहानी बताने से तुम पीड़ा में फँसे रहोगे।

महसूस करने से बचना चूँकि असम्भव है; इसलिए बेहतर है कि तुम उसमें गहरे जाओ, वरना कुछ भी नहीं बदलेगा। इसलिए तुम जो महसूस कर रहे हो उस पर अपना पूरा ध्यान दो और मानसिक रूप से उसे कोई नाम न दो। जब तुम भावनाओं में गहरा उतरो तो बहुत सतर्क रहना।

पहले-पहल, वह एक भयावह व अन्धकारमय जगह लग सकती है, और जब उससे मुँह मोड़ने की इच्छा जगे, तो उसे देखो, उस पर कार्य मत करो। अपने ध्यान को पीड़ा पर लाओ, विषाद, भय, अकेलेपन, आतंक या जो भी है, उसे महसूस करते रहो।

सतर्क रहो, वर्तमान में रहो — अपने पूरे अस्तित्व के साथ, अपने शरीर के हर एक कोषाणु के साथ। जब तुम ऐसा करते हो, तुम अन्धकार में प्रकाश लाते हो। यह तुम्हारी आत्मा की ज्योति है।

इस स्तर पर, तुम्हें समर्पण के बारे में और चिन्ता करने की ज़रूरत नहीं है। वह हो चुका है। कैसे? पूर्ण ध्यान पूर्ण स्वीकृति है, समर्पण है। पूरा ध्यान देने से, तुम वर्तमान की शक्ति का इस्तेमाल करते हो जो कि तुम्हारी आत्मा की शक्ति है।

उसमें प्रतिरोध का कोई भी छिपा हुआ अंश जीवित नहीं रह सकता। उपस्थिति समय को हटा देती है। बिना समय के कोई भी पीड़ा, कोई भी नकारात्मकता जीवित नहीं रह सकती।

> **पीड़ा को स्वीकार करना मृत्यु की यात्रा करना है।** गहरी पीड़ा का सामना करना, उसे रहने देना, अपने ध्यान को उसमें ले जाना, जागरूक रूप से मृत्यु में प्रवेश करना है। जब तुम इस तरह की मृत्यु पाते हो, तुम्हें एहसास होता है कि मृत्यु नहीं है — और इसलिए डरने की कोई बात नहीं है। केवल अहम् मरता है।

कल्पना करो कि सूरज की एक किरण यह भूल जाती है कि वह सूरज का अभिन्न हिस्सा है और भ्रमवश ऐसा मान लेती है कि उसे अपने अस्तित्व को बचाने के लिए संघर्ष करना है, और वह सूरज से अलग एक पहचान रच कर उसे पकड़ लेती है। क्या इस भ्रम की मृत्यु विश्वसनीय रूप से मुक्तिकारक होगी?

> **क्या तुम एक आसान मृत्यु चाहते हो?** क्या तुम बिना पीड़ा, बिना सन्ताप के मरना चाहोगे? फिर हर क्षण अतीत के लिए मर जाओ, और आत्मा के प्रकाश से उस भारी, समयबद्ध आत्मा, जो तुम सोचते हो 'तुम' थे उसे प्रकाशित करने दो।

सूली का पथ — पीड़ा द्वारा आत्मज्ञान

सूली का पथ आत्मज्ञान का पुराना तरीका है और कुछ समय पहले तक केवल वह एक तरीका था। परन्तु उसे खारिज मत करो या उसके प्रभाव को कम मत समझो। वह अभी भी सफल है।

सूली का पथ पूरा उलटा जाना है। इसका अर्थ है कि तुम्हारे जीवन की सबसे खराब चीज़ें, तुम्हारी सूली, अब तक तुम्हारे जीवन में घटी हैं सबसे अच्छी चीज़ में बदल जाती है। और यह होता है तुम्हें समर्पण, मृत्यु के लिए बाध्य करने से, कुछ भी नहीं बन जाने के लिए बाध्य करने से, ईश्वर बन जाने से — क्योंकि ईश्वर भी 'कुछ भी नही' है।

पीड़ा के द्वारा आत्मज्ञान — सूली का पथ — का अर्थ है, कि तुम्हें ज़बरदस्ती वैकुण्ठ में धकेल दिया जाता है। तुम चीखते हो, चिल्लाते हो। अन्ततः तुम समर्पण करते हो क्योंकि तुम और अधिक पीड़ा सहन नहीं कर पाते, परन्तु जब तक यह होगा पीड़ा कायम रहेगी।

सजग होकर आत्मज्ञान को चुनने का मतलब है, अतीत और भविष्य से अपने लगाव को त्यागना और वर्तमान को अपने जीवन का मुख्य केन्द्रण बना लेना।

इसका अर्थ है समय में रहने के बजाए आत्मस्थिति में रहने का चुनाव करना। इसका अर्थ है, जो है उसे स्वीकार करना।

फिर तुम्हें पीड़ा की ज़रूरत नहीं होती।

तुम्हें क्या लगता है कि यह कहने के लिए, 'मैं और पीड़ा, और दर्द का निर्माण नहीं करूँगा'। तुम्हें और कितना समय चाहिए? चुनाव करने से पहले तुम्हें और कितनी पीड़ा चाहिए?

यदि तुम्हें लगता है कि तुम्हें और समय चाहिए, तो तुम्हें और समय मिलेगा — तथा और पीड़ा भी। समय और पीड़ा एक दूसरे से अलग नहीं हैं।

चुनाव की शक्ति

चुनाव का मतलब है चेतना — एक उच्च स्तर की चेतना। बिना उसके तुम चुन नहीं सकते। जिस क्षण तुम मन से अपनी पहचान को तोड़ते हो और उसकी वृत्तियों से अपने को अलग करते हो, जिस क्षण तुम उपस्थित होते हो, चुनाव शुरू हो जाता है।

जब तक तुम उस बिन्दु तक नहीं पहुँचते, आध्यात्मिक रूप से तुम अचेतन हो। इसका मतलब है कि मन द्वारा थोपी शर्तों के अनुसार सोचने, महसूस करने और कार्य करने के लिए बाध्य हो।

कोई भी सामान्य रूप से अक्रियाशीलता, द्वन्द्व व पीड़ा को नहीं चुनता। कोई भी पागलपन नहीं चुनता। ये इसलिए होता है क्योंकि तुममें अतीत को विलुप्त करने के लिए पर्याप्त उपस्थिति नहीं है, पर्याप्त प्रकाश नहीं है अन्धकार को दूर करने के लिए। तुम पूर्णरूप से वर्तमान में नहीं हो। अभी तक तुम जगे नहीं हो। और इस सबमें तुम्हारा मन तुम्हारे जीवन को चला रहा है।

ठीक ऐसे ही, यदि तुम उन लोगों में से हो जिन्हें अपने माता-पिता से मन-मुटाव है, यदि तुम अभी भी, उन्होंने जो किया या फिर जो नहीं किया उसके लिए नाराज़ हो, तो तुम यह अभी भी मानते हो कि उनके पास चुनाव था — वे अलग तरह से व्यवहार कर सकते थे। यह हरदम लगता है कि लोगों के पास चुनाव है, परन्तु यह एक भ्रम है। जब तक तुम्हारा मन अपनी शर्तों के साथ तुम्हारा जीवन चलायेगा, तुम्हारे पास क्या चुनाव होगा? कुछ भी नहीं। तुम तो वहाँ हो भी नहीं। मन से पहचान की स्थिति बिल्कुल अक्रियाशील है। यह एक तरह का पागलपन है।

लगभग हर कोई, अलग-अलग मात्रा में, इस बीमारी से ग्रसित है। जिस क्षण तुम्हें इसका एहसास होगा, नाराज़गी रहेगी ही नहीं। तुम किसी की बीमारी पर कैसे नाराज़ हो सकते हो? केवल एक ही सही ज़वाब है — करुणा।

यदि तुम्हारा मन तुम्हें चला रहा है, यद्यपि तुम्हारे पास कोई चुनाव नहीं है, तुम अपनी अचेतना के फल को फिर भी भोगोगे और अधिक पीड़ा का निर्माण करोगे। तुम भय, द्वन्द्व, समस्याओं और पीड़ा के बोझ को ढोवोगे। फिर वह पीड़ा अन्ततः तुम्हें अचेतन अवस्था से तुम्हें बाहर निकलने के लिए मज़बूर कर देगी।

> **तुम तब तक दूसरों या स्वयं को क्षमा नहीं कर सकते,** जब तक कि तुम अपने आत्मभाव को अतीत से आता पाओगे। केवल वर्तमान की शक्ति को पाकर, जो कि तुम्हारी अपनी शक्ति है, सच्ची क्षमा उभर सकती है। ऐसा होने पर अतीत शक्तिरहित हो जाता है और तुम्हें यह गहरा एहसास होता है कि तुम्हारे द्वारा किया गया कुछ भी या तुम पर जो भी किया गया है, वह तुम्हारे सच्चे स्वरूप के प्रकाश को छू भी सकता है।
>
> जब तुम जो है उसे समर्पित होते हो और अतः पूर्ण रूप से उपस्थित होते हो, तो अतीत कोई प्रभाव नहीं रह जाता। तुम्हें उसकी ज़रूरत नहीं होती। उपस्थिति साधन है, वर्तमान साधन है।

प्रतिरोध को मन से अलग नहीं किया जा सकता, इसलिए प्रतिरोध को त्यागना — समर्पण — मन का तुम्हारे स्वामी के रूप में अन्त है, उस पाखण्डी का जो 'तुम' होने का, झूठा भगवान होने का दिखावा करा रहा था। सभी धारणाएं व नकारात्मकताएं नष्ट हो जाती हैं।

आत्मा का लोक, जो मन द्वारा ढक गया था, खुल जाता है।

अचानक, तुम्हारे अन्तर में गहन-स्तब्धता उभरती है, अथाह शान्ति का भाव उभरता है।

और उस शान्ति में, महान आनन्द है।

और उस आनन्द में, प्रेम है।

और गहनतम् अन्तःकरण में, पावन और अपना 'वह' है, जिसका कोई नाम नहीं है।

For information on talks, satsangs, intensives, retreats, and meditations given by Eckhart Tolle see:

www.eckharttolle.com

For further details, contact:
Yogi Impressions Books Pvt. Ltd.
1711, Centre 1, World Trade Centre,
Cuffe Parade, Mumbai 400 005, India.

Fill in the Mailing List form on our website and receive, via email, information on books, authors, events and more.
Visit: www.yogiimpressions.com

Telephone: (022) 61541500, 61541541,
Fax: (022) 61541542
E-mail: yogi@yogiimpressions.com

Join us on Facebook:
www.facebook.com/yogiimpressions

वैयक्तिक विकास / आध्यात्मिकता

तुम्हें केवल वर्तमान क्षण को पूर्ण रूप से अपनाने की ज़रूरत है। ऐसा करने से तुम स्वयं व इस क्षण से बहुत सहज हो जाते हो।

बहुत ही कम समय में, दि पॉवर ऑफ नॉउ पुस्तक अपने समय की महानतम् आध्यात्मिक पुस्तकों में से एक साबित हो चुकी है। उसमें ऐसी शक्ति है जिसका शब्दों में वर्णन नहीं किया जा सकता। उसमें हमें विचारों के परे एक ऐसे स्थान में ले जाने की क्षमता होती है, जहाँ पर हमारे विचारों द्वारा निर्मित परेशानियाँ विलीन हो जाती हैं और हम यह खोज पाते हैं कि एक मुक्त जीवन का निर्माण करने का क्या मतलब होता है।

'दि पॉवर ऑफ नॉउ' (*शक्तिमान वर्तमान*) में ऐसे अनेक विशिष्ट अभ्यास और स्पष्ट बातें हैं जो हमें यह दिखाती हैं कि कैसे हम उस 'कृपा, सहजता व सरलता' को अपने लिए खोज सकते हैं, जोकि अपने विचारों को पूरी तरह से केवल शान्त करने से और वर्तमान क्षण के जगत को देखने से आती है।

प्रैक्टिसिंग दि पॉवर ऑफ नॉउ में "दि पॉवर ऑफ नॉउ"के उन अंशों को, जो हमें सीधे विशिष्ट अभ्यासों तक ले जाते हैं, बहुत बारीकी से पिरोया गया है। इस पुस्तक को धीरे-धीरे पढ़ें या फिर कहीं से भी खोल लें, शब्दों पर चिन्तन करें, शब्दों के बीच की रिक्तता पर मनन करें — और हो सकता है कुछ समय में या फिर तुरन्त ही — तुम्हें ऐसा कुछ एहसास हो जो तुम्हारे जीवन को बदल दे। तुम्हें न केवल अपने जीवन, बल्कि अपने संसार को भी बदलने व उसे सँवारने की क्षमता शक्ति का अनुभव होगा।

वह यहाँ है, वर्तमान में, इस क्षण में : तुम्हारे अस्तित्व की पवित्र उपस्थिति। वह यहाँ है, वर्तमान में, कहीं भविष्य में नहीं : हमारे अन्तर में एक ऐसा स्थान जो हरदम है और जो जीवन की उथल-पुथल के परे रहेगा भी। शब्दों के परे का शान्त जगत, आनन्द का जगत जिसका कोई जोड़ नहीं।

वह तुम्हारे हाथों में है। वर्तमान क्षण की शक्ति का अभ्यास करना शुरू करो।

YogiImpressions®